SRI VENKATESWARA INTERNSHIP PROGRAM FOR RESEARCH IN ACADEMICS (SRI-VIPRA)

Project Report of 2022: SVP-2228

" हिंदी लोक नाट्य सांग परंपरा और उसमें दादा लख़मीचंद का स्थान/महत्व "

IQAC
Sri Venkateswara College
University of Delhi
Dhaula Kuan
New Delhi -110021

SRIVIPRA PROJECT 2022

Title : **हिंदी लोक नाट्य सांग परंपरा और उसमें दादा लख़मीचंद का महत्व/ स्थान**

Name of Mentor: Dr. Jitendra Veer Kalra **Name of Department: Hindi** **Designation: Assistant Professor**	

List of students under the SRIVIPRA Project

S.No	Name of the student	Course	Photo
1	Abhishek	B.A. (Hons.) Hindi	

2	Himanshi Bairwa	B.A. (Hons.) Hindi	
3	Prerna	B.A. (Hons.) Hindi	
4	Pritam Sihag	BA (Hons) Hindi	
5	Roshan	B.A. (Hons.) Hindi	

6	Utkarsh Mishra	B.A. (Hons.) Hindi	
7	Utkarsh Pulkit	B.A. (Hons.) Hindi	
8	Vivek Kushwaha	B.A. (Hons.) Hindi	

9	Yashraj	B.A. (Hons.) Hindi	

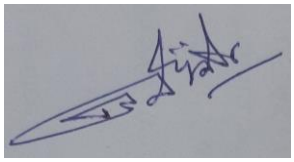

Signature of Mentor

Sri Venkateswara College

University of Delhi SRIVIPRA-2022

(Sri Venkateswara College Internship Program in Research and Academics)

This is to certify that this project on लोकनाट्य सांग परंपरा और उसमें दादा लखमीचंद का महत्व/ स्थान was registered under SRIVIPRA and completed under the mentorship of Dr Jitendra Veer Kalra during the period from 21st June to 7th October 2022.

Sharda Pasricha and S. Krishnakumar

Coordinators

Prof. C Sheela Reddy

Principal

CONTENTS

S.No	Topic	Page No.
1	लोक साहित्य	8
2	सांग साहित्य : उद्भव और विकास	8
3	सांग लोक नाट्य की विशेषताएं	10
4	पंडित लखमीचंद का जीवन परिचय	12
5	पंडित लखमीचन्द का कृतित्व	13
6	पंडित लखमीचंद के सांगों में भक्ति–भावना	14
7	पंडित लखमीचंद के सांगों में गुरु–भावना	15
8	पंडित लखमीचंद के सांगों में नारी–चित्रण एवं नारी–भावना	16
9	पंडित लखमीचंद के सांगों में प्रकृति–चित्रण	17
10	पंडित लखमीचंद के साहित्य में पारिवारिक संबंध	17
11	पंडित लखमीचंद के साहित्य में आर्थिक मूल्य	18
12	पंडित लखमीचंद की भाषा शैली	19
13	लखमीचंद के साहित्य में समाज–चित्रण एवं सामजिक–मूल्य	21
14	लखमीचंद के साहित्य में सांस्कृतिक छटा	23
15	दादा लखमीचंद विरचित विभिन्न सांगों का विश्लेषण	24
16	सन्दर्भ ग्रन्थ सूची	40

तिरुमाला तिरुपति देवस्थानम
श्री वेंकटेश्वर महाविद्यालय
(दिल्ली विश्वविद्यालय)
श्रीविप्रा लघुशोध परियोजना 2228

लोकनाट्य सांग परंपरा और उसमें दादा लखमीचंद का महत्व/स्थान

मार्गदशक : डॉ. जितेंद्र वीर कालरा

लोक साहित्य

लोक साहित्य शब्द 'लोक' और 'साहित्य ' इन दो शब्दों से बना है । इसक वास्तविक अर्थ होता है – 'लोक का साहित्य '। लोक साहित्य अंग्रेजी के 'फोक लिटरेचर' का अनुवाद है। लोक साहित्य एक मौखिक अभिव्यक्ति है , जो एक व्यक्ति या व्यक्ति समूह द्वारा गढ़ी गई , परन्तु कालान्तर में वह सम्पूर्ण लोक समूह का अंग बन गया । इसमें सम्पूर्ण समाज की युग – युगीन वाणी साधना समाहित रहती है । भारतीय लोक साहित्य में समाज के प्रत्येक अंग व व्यक्ति के सम्पूर्ण जीवन दर्शन को अभिव्यक्त किया जाता है । हजारीप्रसाद द्विवेदी के अनुसार , " लोक शब्द का अर्थ 'जनपद' या ' ग्राम ' नही है , बल्कि नगरों और ग्रामों में फैली समस्त जनता है , जिसके व्यवहारिक ज्ञान का आधार पोथियाँ नहीं है ।" (हजारीप्रसाद द्विवेदी , जनपद पत्रिका , अंक – 1 , काशी विश्वविद्यालय , संवत् 2009 , पृष्ठ 65)

सांग साहित्य : उद्भव और विकास

सांग परम्परा हरियाणा , पश्चिमी उत्तर प्रदेश , व पूर्वी राजस्थान की लोक नाट्य परम्परा है । सांग , स्वांग का अपभ्रंश है , जिसका तात्पर्य है – किसी अन्य का रुप धारण करना या नकल करना । 'श्री जगदीश माथुर' सांग का प्राचीनतम नाम संगीत मानते हैं ।

लोककवि राम किशन ने सांग परम्परा की शुरुआत 13 वीं सदी से मानी जाती है , उन्होनें लिखा है कि –

" नारनौल का गुजराती , ब्राह्मण बिहारीलाल था ,
सांग शुरु करया , सन् 1206 का साल था । "

ऐसा माना जाता है कि मुगलों के समय में सांग मंचन पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगा दिया था क्योंकि सांगों के माध्यम से अपनी संस्कृति व देशभक्ति का ज्ञान कराया जाता था। प. बिहारी लाल के बाद उनके शिष्य चेतन ने सांग शुरू किये थे। 17 वी शताब्दी में सांगो का दौर पुनः आरम्भ हुआ जिसको आरम्भ करने वाले बाबू बालमुकुन्द गुप्त

थे। उसके पश्चात् फिर बालमुकुन्द के शिष्य प. किशनलाल भाट हुए जिन्होंने इस विधा को अत्यंत महत्व दिया।

प. मांगेराम सांगी के अनुसार सांग की परम्परा 200 वर्षों से चली आ रही है। तब से लेकर अब तक इसमें काफी परिवर्तन आये हैं । शुरुआत में सांग की कथा को गायकी में पेश किया जाता था । 18 वी सदी के पुर्वार्ध में ' सांग के पितामह ' कहे जाने वाले किशनलाल भाट ने इसमें परिवर्तन किये तथा नये चरित्र जोड़े , जिनमें औरत की भूमिका में मर्द एक प्रमुख चरित्र था । हरदेवा , दूलीचंद , चतरू , भरथू , बाजे नाई , अलीबख्श , बालकराम , लखमीचंद आदी प्रमुख सांगी रहे हैं ।

सांग परम्परा के इतिहास को अध्ययन की दृष्टि से चार भागों में विभाजित किया जाता है –

1 . संक्रमण काल (1200 ई. से 1750 ई.) –

ये प्रारंभिक काल माना जाता है । इस काल में सांग परम्परा अपने शैशवावस्था में थी । रामनारायण अग्रवाल जी के अनुसार , " 11वी सदी में मल्ल जाट , रावत राजपूत व रंगा जुलाहे ने मिलकर स्वाग मंडली बनाई ।"मुगल काल में प्रतिबंध लगने के बाद 18 वी सदी में इस कला का पुनः उदय हुआ । इस काल के प्रमुख सांगी बिहारीलाल व किशनलाल भाट थे ।

2 . प्रारंभिक काल (1750 ई. से 1850 ई.) –

इस काल में सांग परम्परा ने हरियाणा व आस पास के इलाकों में अपना नाम कमा लिया था । मेले , त्योहारों , विवाह आदि उत्सवों पर सांग आयोजित किये जाने लगे । सादुल्ला (पण्डुन का कड़ा) व बंसीलाल (गुरु गुग्गा , राजा गोपीचंद , राजा नल) इस समय के प्रमुख सांगी थे ।

3. उत्कर्ष काल (1850 ई. से 1950 ई.) –

इस काल को सांग साहित्य का 'स्वर्ण युग' कहा जाता है । सांग परम्परा के दिग्गज खिलाड़ी इसी काल में हुये थे , जिनमें अलीबख्श , बालकराम , दीपचंद , बाजे भगत एवं प. लखमीचंद का नाम प्रमुख है । अलीबख्श के प्रमुख सांगों में पद्मावत , कृष्ण– लीला , निहालदे , फसाना आदी प्रमुख हैं । अलीबख्श ने हिन्दु – मुस्लिम एकता के लिये कार्य किया । वे कहते हैं –

" हिन्दु के हर भक्त, मुसलमानों के पीर मनाऊं ,
अलीबख्श दोनों – दोनों के दंगल में गुण गाऊं । "

19 वीं सदी के अन्त में सांगी दीपचंद ने कुछ मूलभूत परिवर्तन किये , जैसे सांगों का आयोजन बड़े मंचों पर होने लगा , व सांगों में वीर रस को महत्ता दी गई । लखमीचंद सांग परम्परा के सबसे सफल सांगी हुये ।

4 . आधुनिक काल (1950 से अद्यतन) :–

इस काल के नामी सांगी प. लखमीचंद के शिष्य प. मांगेराम हुये जिन्होंने लगभग 40 सांगों की रचना की । रामकिशन व्यास ने सत्यवान सावित्री , शशिकला व फौजी मेहर सिह ने सुभाषचंद बोस नामक सांगों की रचना की।

सांग लोकनाट्य की विशेषताएं :–

1. जनसाधारण का मनोरंजन करने के साथ – साथ सामाजिक विसंगतियों पर व्यंग्य भी करते हैं ।
2. सांग में गायन – वादन , अभिनय व नृत्य की त्रिवेणी का अद्‌भुत संगम होता है ।
3. स्त्री पात्रों की भूमिका भी पुरुष पात्र निभाते हैं ।
4. सांग के गायन की शुरुआत में अनिवार्यतः दोहा कहा जाता है ।
5. सांग खुले मैदानों में तख्तों द्वारा बने मंचों पर आयोजित होता है ।

वर्तमान में स्त्रियां भी सांगों का मंचन करने लगी हैं । देवीशंकर प्रभाकर ने शोध में लिखा कि – " हरियाणा में कुछ एसी सांग मंडलियां भी काम करती हैं, जिनमें सभी औरतें काम करती हैं । ये सांग मंडलियां यमुना के खादर में खेल खेलती हैं । "

लोकनाट्य को लेकर विद्वानों के मत –

डॉ. नगेंद्र के अनुसार,"लोक नाटक सामूहिक आवश्यकताओं और प्रेरणाओं के कारण निर्मित होने से लोक कथानकों, लोकविश्वासों और लोक तत्वों को समेटे हुए चलता है और जीवन का प्रतिनिधित्व करता है।"

डॉ. रामकुमार वर्मा के अनुसार, "लोकधर्मी रूढ़ियों की अनुकरणात्मक अभिव्यक्तियों का वह नाट्यरूप जो अपने अपने क्षेत्र के लोकमानस को आह्लादित, उल्लासित और अनुप्राणित करता है लोकनाट्य कहलाता है।"

डॉ. सत्येंद्र के अनुसार,"लोक रंगमंच लोक की अपनी वस्तु है। यह व्यवसायार्थ नहीं होता। इसके अखाड़े अवश्य होते हैं। ये अखाड़े समस्त रंगमंच के अनुष्ठान को गुरु शिष्य की गांठ में बांधकर खड़े होते हैं।"

डॉ. श्रीराम शर्मा के अनुसार,"वह नाटक लोक नाटक कहलाता है जो लोक स्वभाव से उत्पन्न होकर, लोक चित्त में रमता हुआ, लोक धर्म के निर्वाह के साथ लोक सिद्धि को प्राप्त करता है।"

डॉ. श्याम परमार के अनुसार,"लोकनाट्य से तात्पर्य नाटक के रूप से है जिसका संबंध विशिष्ट शिक्षित समाज से भिन्न सर्वसाधारण के जीवन से हो और जो परंपरा से अपने अपने क्षेत्र के जन समुदाय के मनोरंजन का साधन रहा हो।"

लोकनाट्य के कुछ मुख्य प्रकार हैं –

1. जात्रा
2. कुटियाट्टम

3. कृष्णाट्टम
4. तमाशा
5. तेरुक्कुत्तु
6. दशावतार
7. भाओना
8. भवाई
9. भांड–पाथर
10. माच
11. मुडियेटटु
12. नौटंकी
13. यक्षगान
14. रासलीला
15. स्वांग
16. रामलीला
17. करियाला
18. ख्याल
19. ओट्टन थुलाल
20. भाम कलापम

आरम्भ के वर्षों में लखमीचन्द के सांग मुख्य तौर पर नवयुवकों में ही लोकप्रिय रहे शिक्षित वयोवृद्ध समाजसेवी वर्ग में इन्हें विशेष सफलता प्राप्त नहीं हो पाई क्योंकि उनके सांगों में अधिकांश तौर पर श्रृंगार प्रवृति पाई जाती थी। आमजनों में ऐसे सांग सम्मान की दृष्टि से नहीं देखे गए। इसमें बदलाव लाने हेतु उन्होंने अपने साथियों के साथ मिलकर पुराणों की कथाएं और उपनिषदों के प्रसंग सुने और इसका प्रभाव उनके सांगो के विषयों पर स्पष्ट रूप से पड़ा, श्रृंगार पर आध्यात्मिकता और यथार्थ का वर्चस्व बढ़ता गया।

इसके बाद पौराणिक लोककथाओं और अपनी कल्पना पर आधारित सांगों की रचनाओं की शुरूआत की और अनुपम मंचन के बल पर वो जनमानस के मन–मष्तिष्क चंत छाते चले गए और स्वांग कला को लोकप्रियता और कलात्मकता दोनों ही लिहाज से चरमोत्कर्ष पर पहुंचा दिया । इनके द्वारा 2500 रागनियों 1000 नई लोकधुनों' का विकास किया मात्र 1100 रागणियों और 867 लोकधुनों को ही संरक्षित रखा जा सका है। इनके साँगों की ख्याति अविभाजित हिंदुस्तान के आज के पाकिस्तान अफगानिस्तान बॉर्डर से लेकर सुदूर पूर्व में बरेली, उत्तर में जम्मू–पठानकोट हरिद्वार से लेकर दक्षिण में मुंबईया फिल्मों तक भी पहुँच गयी थी। लख्मीचन्द ने हरियाणवी सांग को नया मोड़ दिया। श्री रामनारायण अग्रवाल ने 'सांगीतः एक लोक–नाट्य परम्परा' नामक ग्रंथ में स्पष्ट किया है– ''इन सब सांगियों में लख्मीचंद सर्वाधिक प्रतिभावान थे। रागनी के वर्तमान रूप के जन्मदाता वास्तव में लखमीचंद है। कबीर की भांति लोक भाषा में वेदान्त तथा यौवन और प्रेम के मार्मिक चित्रण में लखमीचंद बेजोड थे। इन जैसा लोक जीवन का चितेरा सांगी हरियाणे में दूसरा नहीं हुआ। लखमीचंद के बारे में उनके शिष्य पं0 मांगेराम ने 'खाण्डेराव परी' नामक सांग में इस प्रकार कहा–

''लखमीचंद केसा दुनियां म्हं, कोई गावणियां ना था।
बीस साल तक सांग करया, वो मुंह बावणियां ना था।

वो सत का सांग करया करता, शर्मावणिया ना था।
साची बात कहणे तै, कदै घबरावणियां ना था।''

पंडित लखमीचंद का जीवन परिचय

पंडित लख्मीचंद हरियाणवी भाषा के प्रसिद्ध कवि व लोक कलाकार थे और उन्होंने हरियाणवी रागनी और साथ में लोक नाट्य सांग की परंपरा में उल्लेखनीय योगदान दिया है। उनके इसी योगदान के कारण पंडित लख्मीचंद को ''सूर्य कवि'' भी कहा जाता है।

सूर्य कवि पंडित लखमी चंद जी का जन्म 1901 में हरियाणा के सोनीपत जिले के गांव जांटी कला में हुआ था। पंडित लख्मीचंद के पिता का नाम उदमी राम था। पंडित जी बहुत ही सामान्य परिवार से थे तथा इनका परिवार बहुत निर्धन था। जिसके कारण पंडित लखमीचंद का बालपन बहुत कठिनाइयों से गुजरा। धनाभाव में पंडित जी को स्कूली शिक्षा छोड़कर पशु चराने का कार्य करना पड़ा।

पंडित लख्मीचंद को बालपन से से ही गीत–संगीत में बहुत अधिक रूचि थी अपनी इसी रूचि के कारण पंडित जी कुछ पंक्तियां याद करके पशु चराते समय गुनगुनाया करते थे। वह अलग–अलग स्थान पर जाकर अपनी धुन गुनगुनाते थे जिसके कारण पंडित लखमी चंद के गीत लोगों को बहुत अधिक प्रभावित करने लगे थे। फलस्वरूप उनको बहुत–सी सांग मंडलियां अपने साथ सांग प्रसंगों में ले जाने लगीं। किंतु उस समय सांग इत्यादि को समाज में बहुत अच्छा नहीं माना जाता था। इन सब कारणों से पंडित लखमीचंद का परिवार उनके भविष्य को लेकर बहुत चिंतित रहता था।

कहते हैं कि एक बार गांव में किसी शादी में उस समय के प्रसिद्ध कवि और गायक 'मानसिंह' आए हुए थे तथा वहां पंडित लखमीचंद भी गए हुए थे। उन्होंने मानसिंह की सांग एवं रागनियां पूरी रात सुनीं तथा वह उनकी रागनी एवं सांग कला से अति प्रभावित हुए, जिसके बाद पंडित लखमीचंद ने मानसिंह को अपना गुरु मान लिया था।

इसके पश्चात पंडित लख्मीचंद मान सिंह जी से औपचारिक शिक्षा लेते रहे तथा उसके बाद पंडित लखमीचंद अपनी सांग कला को और पक्का करने के लिए मेहंदीपुर के श्री चंद्र सांगी की सांग मंडली में सम्मिलित हो गए और उन्होंने वहां अपनी सांग व रागिनियों की प्रतिभा को और निखारा तथा इसके बाद वह सोहन कुंडलवाला के साथ काम करने लगे।

पंडित लखमीचंद ने कौशल के बल पर सांग को लोकप्रिय बनाया। वह गाते समय अपने गुरु मान सिंह को अवश्य याद करते थे। सोहन कुंडलवाला के यह कहने पर कि तुम्हारे गुरु हमसे ज्यादा जानते हैं क्या? इस पर नाराज होकर वह घर के लिए स्टेशन पर चले गए। सूबेदार शंकर सिंह के मनाने पर वह वापस गए। उसके बाद उन्होंने उस मंडली को छोड़ दिया। सांग की समाप्ति के बाद सोहन कुंडलवाला के शिष्यों ने दूध में पारा मिलाकर उन्हें मारने की कोशिश की। गुरु की कृपा से प्राण तो बच गए पर उनकी आवाज चली गई। घर लौट कर ग्यारह महीने तक उन्होंने अनवरत कठोर साधना की और पुनः अपनी वाणी के जादू को प्राप्त किया।

जब सोहन कुंडल व उनके गांव आए तो उन्होंने कहा कि ''यदि आज अंधे के शिष्य से गाने में बाजी मार लो तो मैं तुम्हें अपना गुरु बना लूंगा या तो तुम टेक रखो मैं कली बजाऊं या मैं टेक रखूं तुम कली बजाओ।'' सांग में सोहन ने राजा भोज का अभिनय किया और पंडित लख्मीचंद ने सरणदे का अभिनय किया। लख्मीचंद निरंतर अच्छा गा रहे थे। अतिथि की अपमान की बात सोहन करने लगे। इस पर लखमीचंद ने कहा कि मैं तो अपने गुरु की प्रतिष्ठा को स्थापित करने का प्रयास कर रहा हूं।

इसके बाद उन्होंने किसी सांगी के सांग में स्त्री की भूमिका नहीं निभाने का प्रण लिया। इसके बाद गुरु भाई यशपाल उर्फ जैली के साथ मिलकर एक अलग सांग मंडली गठित की। पंडित लख्मीचंद ने अपने अथक प्रयासों एवं मेहनत के बदौलत उन्होंने अपने सांगों को लोकप्रिय बनाया। इस प्रकार हरियाणा लोक नाटक परंपरा में दादा लख्मीचंद का प्रमुख योगदान है।

पंडित लखमीचन्द का कृतित्व

हरियाणा की धरती वेद , मन्त्रों से पावन और यज्ञ धूपों से सुगन्धित है। यहां भगवान श्री कृष्ण ने अर्जुन को ''गीता का उपदेश दिया था। यह साधुओं एवं भक्तों की तपस्या की स्थली है। हरियाणा साहित्य और कला का आगार है। यहां के 'लोकनाट्यों मे ''सांग' सर्वश्रेष्ठ विद्या है। इसमें कथा, गीत, संगीत और नृत्य का मंजुल आनन्द का सागर उड़ेलता है।

हरियाणा में मध्यकाल में सांग का प्रारंभ सादुल्ला नामक लोककवि से माना जाता है जबकि राजाराम शास्त्री, लगभग सवा दो सौ वर्ष पूर्व किशन लाल भाट से और फिर पं० दीपचन्द से इसका प्रारंभ मानते हैं। लखमीचन्द ग्रन्थावली के संपादक डॉ. पूर्णचन्द्र शर्मा मानना है कि हरियाणा के ''सांग – साहित्य को नया मोड़ दिया नर गन्धर्व पण्डित लखमीचन्द ने। वे अप्रतिम प्रतिभा के धनी थे। वह हरियाणा के सब सांगियों में सर्वाधिक प्रतिभावन थे। रागिनी के वर्तमान रूप के जन्मदाता वास्तव में लखमीचन्द ही हैं। कबीर की भक्ति लोक भाषा में वेदान्त तथा यौवन और प्रेम के मार्मिक चित्रण में लखमीचन्द बेजोड़ थे। ''लोक–जीवन का चितेरा स्वांगिया हरियाणे में इसरा नहीं सामान्य उन जैसा हुआ''[1] पण्डित लखमीचन्द एक अभावग्रस्त किसान के पुत्र थे। बचपन में ग्वाले के साथ पशु चराना ,रागिनी के टुकड़ों को याद करके गाना ,हाथों से तबला बजाना और घर से भाग कर सांग देखना नित्य –कर्म थे।

पंडित लखमीचंद के परिवार में इनके पिता उदमीराम ,माता शिबिया तथा दो भाई और तीन बहने थीं। इनके एक भाई कंणण, जो इनसे बड़े थे , इलाके के पहलवान थे। लखमीचंद का विवाह अस्लापुर गाँव की श्रीमती भरपाई से हुआ। इनके एक पुत्र –तुलेराम जी थे। तुलेराम अपने पिता की याद को कविता व सांग अभिनय के माध्यम से बनाये रखने के लिए तत्पर हैं। लखमीचंद ने कुल 21 से 23 सांगो की रचना की है। डॉ.पूर्णचंद्र शर्मा ने अपने शोध प्रबंध 'हरियाणा की लोकधर्मी नाट्यपरम्परा में लखमीचंद द्वारा रचित इन सांगों का उल्लेख किया है। इनके नाम हैं – शाही लकड़हारा ,नौटंकी , सरणदे, भरथरी ,पिंगला ,चंद्रहास ,मीराबाई ,हूर मेनका ,शकुंतला ,चीरहरण ,ऊखा –अनिरुद्ध , भगत पूरनमल ,धर्मपाल , ी ,हीर–राँझा

,महकदे–ज्यानी ,चोर–चंडकिरण ,जमाल ,रघुबीर सिंह ,भूप पुरंजन,एवम पद्मावत। परन्तु विद्वान लेखक ने इस सूची में लखमीचंद के नल दमयंती ,विराट पर्व ,चापसिंह , जैसे प्रख्यात सांगों को तो शामिल नहीं किया। हरियाणा लोक साहित्य के मूर्धन्य विद्वान राजाराम शास्त्री के अनुसार, श्रृंगारपरक नौ सांग हैं और चौदह अध्यात्मपरक हैं।'' के. सी० शर्मा के. कथानुसार, लखमीचन्द ने लगभग 21सांगो (लोक नाट्य) की रचना की है। कुल मिलाकर उनके रचित एक हजार भजन और रागिनियाँ मौजूद हैं। लखमीचन्द द्वारा प्रणीत जिन 21 सांगो का नामोलेख के. सी. शर्मा ने किया ने किया है ,वे इस प्रकार हैं – नौटंकी, पद्मावत, ज्यानी चोर गोपीचन्द्र अथवा राजा हीर रांझा, चन्द्रकिरण, शकुन्तला भोज रघवीर, जमाल, गोपीचन्द भायरी 'हरिश्चन्द्र द्रौपदी हीरचरण, कीचक विराट पर्व, सत्यवान सावित्री नलदमयन्ती सेठ भूप पुरंजन ताराचन्द, चापसिंह, शाही लकड़हारा पूरणमल और मीराबाई। ' हरियाणा के सूर्य लखमीचन्द' नामक पुस्तक में वर्णित 21 सांगो में से लक्ष्मीनारायण शर्मा ने अपने ग्रंथ 'रतन कोष' में जिन 14 सम्पूर्ण सांगो को संकलित किया है उनके नाम है– सावित्री सत्यवान, पूर्णभक्त, राजा हरिश्चन्द्र, सेठ ताराचन्द, राजपूत चापसिंह विराट पर्व चीर पर्व, शाही लकड़हारा चन्द्र किरण, नलदमयन्ती मीराबाई ज्यानी चोर, नौटंकी, पद्मावत।

पंडित लखमीचंद के सांगों में भक्ति भावना

पंडित लखमीचंद जी भी सांग के प्रारंभ में पहले भवानी का स्मरण करते और तत्पश्चात गुरु के श्री चरणों में ध्यान है। लखमीचंद भक्ति को अनूठी चीज मानते हैं और वह भक्ति के महत्व पर प्रकाश डालते हुए कहते हैं –

"लखमीचंद बिना भक्ति तन माटी केसी ढेरी"

कवि का मत है कि मानव चोले को धारण करने की सार्थकता इसी में है कि सभी बुरे काम परित्याग कर हरी का भजन व् गुणगान किया जाये –

"मने सब कम छोड़ दिए मंदे, जितने से उत्पात के धंदे''
कहे लखमीचंद मुर्ख बन्दे,यो तन भजन बिन से किस काम को"

लखमीचंद बार–बार मनुष्य को चेताते हैं कि भजन के बिना मनुष्य का उद्धार संभव नहीं है–

"पहलम चेता न निरभाग, भजन बिना रहा काग का ए काग ,
तेरे गई लाग हवा, खेल के मैं"

पंडित लखमीं द अपने सांग 'हरिश्चंद' और 'सत्यवान सावित्री' में मनुष्य को भजन और भक्ति की ओर प्रेरित करते हैं –

"तू लखमीचंद भजन कर हरी का, मुक्ति का पद पा ले"
"पी ले भगति रस का प्याला, रट ले राम नाम की माला"

भगवान श्रीकृष्ण की जिस कृपा दृष्टि होगी, उसे निश्चय ही सफलता मिलेगी,इस सन्दर्भ में सांग 'ताराचंद' से उद्धत यह उदहारण निम्नवत है–

"चौबीस घंटे चर्चा मन में हरी भजन की लखमीचंद वे पार हुए जड़ मैहर श्रीकृष्ण की"

माँ दुर्गा व् भवानी जी का वर्णन सांग 'चापसिंह' में भी किया है–

"लखमीचंद धरे मेरा ध्यान,दुर्गे तू दंगल मै ध्या ली"

लखमीचंद भक्ति को अनूठी चीज मानते हैं। वह भक्ति के महत्व पर प्रकाश डालते हुए कहते हैं –

'लखमीचंद बिना भक्ति तन माटी केसी ढेरी।'

कवि का मत है कि मानव चोले को धारण करने की सार्थकता इसी में है कि सभी बुरे काम परित्याग कर हरि का भजन व गुणगान किया जाए।
"मनै सब काम छोड़ दिए मंदे, जितने से उत्पात के धंदे।
कहै लक्ष्मीचंद्र मूर्ख बंदे यो तन भजन बिन किस काम का।।"

कभी बार–बार मनुष्य को चाहते हैं कि भजन के बिना मनुष्य का उद्धार संभव नहीं है ।
"पहलम चेता ना निर्भग
सांग साहित्य की परम्परा "

पंडित लखमीचंद के सांगों में गुरु भावना

एक हरियाणवी पंक्ति है कि 'निगुरे को ज्ञान कहा' लोक में 'निगुरा' उसे कहते हैं जिसने किसी को गुरु धारण न किया हो। गुरु धारण न किया हो, जन– सामन्य में प्रचलित धारणा के अनुसार गुरु ही किसी व्यक्ति के मन–मस्तिष्क में ज्ञान की ज्योति प्रज्वलित करता है।

लोक कवियों ने पग–पग पर अपने गुरु को श्रद्धा सुमन अर्पित किये हैं और शिक्षा एवं ज्ञान के उपार्जन के लिए गुरु का आभार प्रदर्शित किया है। वे मातृ–भूमि और ईश्वर के प्रति कृतज्ञता–भाव प्रकट करना कर्तव्य समझते हैं और गुरु की सेवा व वंदना करने को आपना सौभाग्य मानते हैं। वे अपने गुरु एवं गुरु परम्परा का उल्लेख करते समय बड़े गौरव का अनुभव करते हैं। लखमीचंद की अपने गुरु मानसिंह के प्रति समर्पण–भावना द्रष्टव्य है। लखमीचंद ने गुरु की महिमा का गुणगान जिस प्रगाढ़ आस्था एवं निष्ठा के साथ किया है,वह सर्वथा अनुकरणीय एवं सराहनीय है। वह अपने आप में एक आदर्श है,जब भावविभोर हो लखमीचंद नानाविध गुरु का स्मरण करते हैं, तो हमारे सम्मुख गुरु–भक्ति–भाव का एक अनूठा आदर्श प्रस्तुत करते दिख पड़ते हैं। उनका निश्चय है कि गुरु की सेवा कर भवसागर पार किया जा सकता है। सांग 'हरिश्चंद ' में इसका वर्णन निम्नवत है–
'मानसिंह सतगुरु की सेवा कर के पार उतरिये'
वह सभी को यही सीख देते हैं कि यदि मोक्ष चाहते हो तो गुरु के चरणों की सेवा करो। सांग 'सत्यवान सावत्री' में इस प्रकार कहा है–
"कह लखमीचंद गुरु सेवा कर मुक्ति मारग तोह ज्या"
दादा लखमीचंद गुरु की चरण–रज को मस्तिष्क पर धारण कर स्वयं को गौरवान्वित हुआ पाते हैं –
"गुरु मानसिंह के चरण की धरी मस्तिष्क धूल"
वह अपने गुरु को सदैव ऊंचे पद पर आसीन देखना चाहते हैं। 'राजा हरिश्चंद' सांग में इसका वर्णन किया है –
"गुरु मानसिंह ऊचे दर्जे मैं,लखमीचंद कदे नहीं हर्जे"
दादा लखमीचंद अपनी शिक्षा का श्रेय अपने गुरु को ही देते है,सांग 'हरिश्चंद' में इसका वर्णन निम्न प्रकार से किया है –
"सीख ले गुरु मानसिंह पै बाणी,रहे न बल विद्या की हाणी"
वह सभी को गुरुजनों की आदर–मान करने के लिए प्रेरित करते है–
"लखमीचंद मान करो गुरुओ का,रे भव सागर टार ज्याणा सै"

पंडित लखमीचंद के सांगो में नारी चित्रण एवं नारी भावना

नारी के विभिन्न रूपों तथा नारी भावना का जितना विशद एवं विविध विवेचन लखमीचंद ने अपने काव्य में किया है, उतना हरियाणा के किसी अन्य लोक कवि अथवा नाट्यकार ने नहीं किया। लखमीचंद के काव्य में नारी के विभिन्न रूपों एवं पक्षों को अत्यंत प्रभावपूर्ण ढंग से उद्घाटित किया गया है। इसमें एक ओर जहाँ नारी के उज्ज्वल चरित्र का सुन्दर अंकन हुआ है, वही दूसरी ओर उसकी कतिपय त्रुटियों का रेखाकन भी। उनके काव्य में नारी का चित्रण माँ,बहन,बेटी,मौसी,भाभी,पत्नी आदि विभिन्न रूपों में हुआ है। पत्नी का अपने पति के प्रति अगाध प्रेम एक नैसर्गिक तथ्य है,कवि इस बात को सांग 'चाप सिंह' में सोमवती के मुख से इस प्रकार कहलवाता है–

"जी क्यूकर लागैगा एकली का,हो पिया तू जा सै तेरा फिकर करुँगी दिन रात,तेरे बिन के दिखे हो जले इस घर में, जाण की सूण कै जी लिकडे सै,मेरे चेहरे का नूर झडे सै ज्यब जोड़ा बिछड़े सै मन मेली का,हो खोटी डाह सै,हो सै नरम बीर की जात,प्रीति बहुत घणी ब्याहे बार मै"

हरियाणा प्रदेश नारी का चारित्रिक बिम्ब कालांतर में इतिहास, पुराण एवं सामाजिक रीती–रिवाज व परम्पराओं के सांचे में ढलकर निर्मित हुआ है। इसी सांचेमे ढली एक मूर्ति है,लखमीचंद द्वारा रचित सांग 'चापसिंह' की नायिका सोमवती को, जो नारी के धर्म का निम्न शब्दों में व्याख्या करते हैं –

"सास ससुर और ननद पति सब जगह समझती तुमने, मैं पतिव्रता भीर सजन जाणू सूधर्म किस्म नै, लड़ न झगडे चुगली ना चोरी करते किते ना डोल्ले, आये गए की शर्म करे नित रहणा परदे ओहल्ले,पुरुष बिराना बाप बरोबर ना कदे दिल तै होल्ले, मांगता आ ज्या तै पर्दा कर कै भीख जरुरी घाल्हे"

इसी प्रकार काल्पनिक सांग 'शाही लकड़हारा' की नायिका बीना इन शब्दों में व्याख्या करती है –

"बेशक कर कै कत्ल दर दे, बेटी तेरी के परण हर दे सबै पर टार डे परले,
पतिवर्ता सुहाग पिता जी"

सांग 'पूर्णभगत' में बेमेल विवाह की समस्या को किया है, नूणदे को पाने माता–पिता से बूढ़े के साथ विवाह देने का सख्त गिला है–

"माता–पिता कै आग्गे मेरी कुछ ना पार बसाई,ड़ूबे गए माँ लोभ बाप मै मै बुड्ढे सांग ब्याही"

एक स्थान पर कवि नव–विवाहिता की आवश्यकताओं की ओर इंगित करता हुआ,सास–ससुर को इस बारे में जागरूक रहने का निर्देश करता है–

"नई बहू ने चल्ले मैं सो सुख चाहया करे सै, बाले गारा के सास ससुर सो बान्नी लाया करे सै"

लखमीचंद काव्य में नारी के प्रति अविश्वास के प्रसंगो में सर्वत्र की नारी के प्रति मध्ययुगीन दृष्टि के दर्शन होते हैं, लखमीचंद कृत सांग 'चापसिंह' के नायक के मुँह से ये शब्द कहलवाते हैं –

लखमीचंद के समय में नारी आर्थिक रूप से स्वतंत्र होने की कल्पना नहीं कर सकती थी, सांग 'पद्मावत' में तभी तो कहा गया है–

"मर्द बिना धेला ना उठे, इन बीरा की जात का"

पंडित लखमीचंद के सांगों में प्रकृति चित्रण

मानव और प्रकृति का रिश्ता चिरंतन एवं चिरस्थायी है, मानव के जन्म से लेकर मृत्यु पर्यंत सभी कार्य–कलाप प्रकृति के प्रांगण में ही घटित होते हैं , महादेवी के शब्दों में ,"जीवन के रूप दर्शन के लिए प्रकृति आपना अक्षय–कोष खोल देती है और प्रकृति के प्राण–परिचय के लिए जीवन रंगमंच भावाकाश दे डालता है"

लखमीचंद के भजन व सांग साहित्य में स्थलीय, जलीय, आकाशीय, वानसपत्य इत्यादि प्रकार के प्रकृति चित्रण का वर्णन मिलता है। सांगो में अपेक्षाकृत वानस्पत्य प्रकृति चित्रण हुआ है। सांग 'नौटंकी' में नायक फूल सिंह शाम गहराने पर नौटंकी के बागो में रात्रि विश्राम करने कि बात सोचता है। इस तथ्य पर कवि ने संध्या के समय के प्राकृतिक दृश्य का सजीव चित्रण किया है –

"चढ्या आलकस काया कै मैं पुर्जा–पुर्जा घेरा, न्यो सोची थी फुलसिंह नै बार बांगा मैं डेरा,संध्या समय अर्थ सूरज का वो भी थम–थम चालै,संध्या समय पवन बंद होज्या दरखत भी कम हाले,दिन भर पक्षी उड़े भतेरे ना कसार उड़न में धाले,अंडे बच्चे पड़ आलणी संध्या समय संभाले,कीड़ी हाथी पशुपखेरू सब चाहते रैन बसेरा"

सांग 'ज्यानी चोर' में अदली के राज्य में रात्रि को विश्राम करने के लिए किसी 'ठोर–ठिकाने' की तलाश में जब नायक नगर से बहार एक बगीचे में पहुचता है तो उसकी शोभा व रख–रखाव को देख कर उसका मन बहुत प्रसन्न होता है। उसे यह सुरम्य स्थान अत्यंत लुभावना और विश्राम करने के लिए उपयुक्त जान पड़ता है। कवि के द्वारा इस सुन्दर बगीचे का वर्णन इन शब्दों में किया गया है –

"ठंडी–ठंडी हवा चले किसा सब्ज बाग लहरावे,चार घडी आराम करे आड़े नींद जोर की आवे,कितना सुन्दर बाग लगाया माली की चतराई,बिरवे बूते लग रे पड़ी बिच मै राही,लम्बा चौड़ा नाई–बाड़ा करली खूब घुमाई,जिसा ठिकाना चाहिए था उसी होगी मन कि चाही,ज्यानी चोर भाग मै बडके चारों तरफ लखावे"

'पद्मावत' के सांगो में नायिका के शारीरिक सौन्दर्य की उपमा पके हुए फल से भी की गयी है–

"घाल्लण जोग्गा गोझ्य मै ,पाक्या होड़ अंजीर,चाहे कोए देख लयो खाके"

सांग 'चापसिंह' में विभिन्न प्राकृतिक उपमानो के ब्याज से युवावस्था का वर्णन अत्यंत सुन्दर बन पड़ा है –

"जोबन फूल चमेली का, हो महंगा भा सै सब खिल रहे सै फल–पात,खसबो ले लिए हो उठा कै कर मै"

पंडित लखमीचंद के साहित्य में पारिवारिक सम्बन्ध –

प्रत्येक व्यक्ति का अपने परिवार से घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। पारिवारिक संबंधो में इतना प्रबल चुम्बकीय आकर्षण होता है कि मनुष्य स्वयं अपने परिवार की ओर

चला आता है। अपने घर और परिवार से बाहर गया होने पर उसे अपने परिवार की याद सताती है। वह विरह से व्याकुल हो उठता है और घर की तरफ बरबस दौड़ जाना चाहता है। कारण यह है कि मनुष्य का तन–मन–प्राण घर–परिवार के परिवेश में इस प्रकार रच–बस गए होते हैं कि वह उससे जुदा होने कि कल्पना नहीं कर सकता है। भारतीय समाज में गृहस्थ धर्म का पालन करना सर्वोपरि धर्म माना जाता गया है। निम्नलिखित इसी तथ्य को सांग 'पूर्णभगत' के माध्यम से बताते हैं –

"पिता के हुकुम से स्वयम्भू मनु नै सतरूपा कन्या ब्याही,
गृहस्थ धर्म का पालन करना प्रथम रीती बतलाई"

पुत्र की महत्ता को दरसाने वाले कुछ इस प्रकार के भाव नौटंकी के सांग में प्रकट किये गये है। यहाँ सेठानी भूपसिंह की पत्नी से कहती है–

"एक बालक बिन इस रंग महल की के लहर दिखाई दे,
बेटे बिन तै टूक भी घर मै जहर दिखाई दे"

लखमीचंद ने जोड़ी के वर की बात का उल्लेख अनेक स्थलों पर किया है, 'शाही लकड़हारा' सांग में नायिका बीना अपनी सहेलियों से कहती है –

"आओ सखी मेरी गैल चलो वर देखे जोड़ी का, बाग में आ रहा परदेसी"

पुत्री के मन में अपनी माँ के लिए असीम प्यार होता है, 'शाही लकड़हारा' सांग मे शाही लकड़हारा माँ को याद करते हुए कहता है –

"मानस की के पार बसवे न्यब हर की माया फिर ली
के जीवे एकले का बण मै बालक की माँ मर ली"

पंडित लखमीचंद के साहित्य में आर्थिक मूल्य –

भारतीय सभ्यता, संस्कृति में जीवन के चार उद्देश्य मने गये है–धर्म,अर्थ,कम और मोक्ष। आज सभी सम्बन्ध धन के पैमाने से ही मापे जाते हैं। आज ऐसा कहा जाने लगा है कि यदि ईश्वर और धन की प्राप्ति करनी है तो पहले अर्थ का अर्जन करना पड़ेगा,अर्थ की पूजा करनी पड़ेगी। आज अर्थ के बिना जीवन में किसी की बात नहीं सुनी जाती। इसका महत्व जीवन में इतना बढ़ गया है कि इसके बिना प्रत्येक व्यक्ति के जीवन की सत्ता ही संभव नहीं है। लखमीचंद ने सांग 'पूर्ण भगत' में एक पंक्ति कही है कि प्राप्त अथवा उपलब्ध धन को कोई त्यागने के लिए तैयार नहीं होता है –

"रूप, जान, धन, राज किसे नै नहीं ताजा"

पंडित लखमीचंद का मानना है कि अर्थ के सम्बन्ध में व्यक्ति का व्यवहार स्वच्छ एवं पाक–साफ होना चाहिये। वह दूसरे के धन–माल को हथियाने या लूटने को घिनौना कर्म समझते हैं। सांग 'नौटंकी' में इसका वर्णन इस प्रकार किया है –

"जै सांझी बण कै–करे कमाई तै माल बांट कै खाण चाहिये,
घर–बारी नै माल लूटना हरगिज नहीं बिराण चाहिए"

मानव जीवन में आर्थिक अभाव एक अभिशाप है,जब धन की कमी होती है तो रिश्तेदार संबंधी सब साथ छोड़ जाते हैं –

"टोटे में ना कुछ इज्जत होती,धोरा धर्जया नहीं गोती,
आज मिलते ना मोती,पड़ रही कांकर खाण"

मालिक,पूंजीपति और धनवान व्यक्ति अपने यहाँ काम करने वाले कर्मचारियों का शोषण करते है। सांग 'राजा हरिश्चंद' में पानी भरते हुए राजा हरिश्चंद्र से मटका फूट जाता है, तो ऋषि विश्वामित्र कालिया भंगी से इस बात की जब शिकायत करता है तो कालिया रडके से हरिश्चंद्र को पीटता है। राजा हरिश्चंद्र उससे कहते है–

"कालिये मतना रडका मार,मेरा दम लिकड़न का डर सै,

मत दे दुःख धण खे राखे, ये चित्त भक्ति में भे राखे,
मैन्ने तेरे ले रखे सै मार,तेरा कर्ज मेरे सिर सै,
इसने मर पड़ कै तारुंगा,बक्श तेरे पां चुचुकारुंगा ।।''

हरियाणा के लोक–जीवन में कहते है–उत्तम खेती,मध्यम व्यापार,अधम नौकरी, इसी बात को आर्थिक मूल्यों के गिरते स्तर के सन्दर्भ में पंडित लखमीचंद ने कहा है–
"बुरी बणी बिराण कर नौकरी कोय मत करियो"

पंडित लखमीचंद की भाषा शैली –

दादा लख्मीचंद सांगों और अपनी रागिनियों के लिए प्रख्यात थे। दादा लख्मीचंद के काव्य में मुख्यतः हरियाणा के रोहतक जिले की आम बोलचाल में प्रयोग की जाने वाली भाषा का स्वरूप दिखाई पड़ता है। यही वजह है कि उनकी भाषा सरल होने के कारण आम लोगों के लिए आसानी से समझ में आने वाली भाषा रही, जो कि उनकी लोकप्रियता का और उनके द्वारा की गई रचनाओं की प्रसिद्धि का प्रमुख कारण बने। उनकी रचनाओं की भाषा सरल व सहज होने के साथ ही साथ उनमें विंबो, प्रतीकों, अलंकारों, मुहावरों एवं लोकोक्तियों का सुंदर प्रयोग मिलता है।

उनकी रचनाओं में आम जनमानस को जोड़ देने वाली भाषा के साथ–साथ लोगों को आकर्षित करने वाली भाषा का विस्तृत प्रयोग हुआ है। उनकी अधिकतर रचनाएं प्रमुखतः हरियाणा की मूल भाषाएं जिनमें हरियाणवी का मुख्य रूप से चित्र नजर आता है, उसका प्रयोग किया गया है। हरियाणवी भाषा हिंदी और उर्दू से काफी निकट मानी जाती है। पंडित लखमीचंद द्वारा की गई रचनाओं की सबसे प्रभावशाली बात यह है कि वह आम लोगों की मूल भाषा से जुड़ाव रखते थे साथ ही साथ उनकी रचनाओं में आम लोगों से जुड़े विषयों पर भी बात होती थी। बड़े–बड़े विद्वानों की भांति जब वह बोलते थे तब प्रतीत होता था।

''मत ले शादी का नाम पिता मैं जती रहूंगा
छोड़ दिये जो तृष्णा के रगड़े, हम से भजन करन मैं तगड़े।''
जो दुनियां के झगड़े बने तमाम दूर मैं कती रहूंगा।
लखमीचंद हरफ कहै गिणक, धन परवस्त बना दिया जनक
मात–पिता का बनके गुलाम, कर शुद्ध गति रहूंगा।''

पंडित जी की भाषा काफी सरल स्वाभाविक एवं रमई रहती थी। उनकी रचनाओं में सबसे अहम बात यह थी कि दादा लखमीचंद अपनी रचनाओं को स्वयं ही करते थे। कई बार वह मौके की नज़ाकत को देखते हुए कुछ से अपनी रागनियां बना लिया करते थे और कई बार तो वह खुद एक मंच पर मंचन करते समय नई नवेली और प्रभावशाली रागनियां कितने घनिष्ट शब्दों के प्रयोग से निर्मित कर लिया करते थे और लोगों के बीच में गान करते थे।

देख सूरत अपणे पूर्णमल की झट मारण को समसेर उठाई ।
राजा गर्ज रह्या, खड्या शेर की तहाँ भरग्या गुस्सा बदन में,
लाली आँख्यां मैं छाई ॥ टेक ॥

कर यूं ठीक अकल, मेरी लागे ना एक पल, कर यूं सिर को कतल,
नहीं करता समाई ।
भेजा भेद बता के, बदी सिर उठाकै, मेरे महलां मैं जाकै,
अपणी मौसी सताई।।

बदला ले ल्यूंगा सारा, घर यूं गल पै कटारा,
कर यूं धड़ तै सिर न्यारा, लिये तवाई।

पंडित जी की भाषा का सबसे प्रभावशाली बिंदु यह था कि उनकी भाषा प्रवाहमयी होती थी यानी इन शब्दों का अर्थ लोगों को काफी आसानी से बोध हो जाया करता था। साथ ही साथ लखमीचंद जी की भाषा में संगीतात्मकता और उनकी भाषा का काव्य प्रयोजन यह उनकी रागिनीयों को एवं उनके द्वारा रचित सांगों को और भी प्रभावशाली बना देते थे।

पंडित लखमीचंद की भाषा में हरियाणा की भाषा का वह अल्हड़पन उनके द्वारा रचित रचनाओं को और भी अधिक प्रभावशाली एवं आकर्षक बना देता था। अपनी रचनाओं में मुहावरे एवं लोकोक्तियों का प्रयोग करना तो कोई उनसे सीखे जिस प्रकार आम बोलचाल की भाषा में मुहावरों को और को शामिल करके उन्होंने अपनी रचनाओं को आम जनमानस तक पहुंचाने का काम किया वह अतुलनीय है। आज भी कई जगहों पर लोगों को उनकी रागनियां मुंह जबानी याद हैं। उनकी भाषा हरियाणा की आम बोलचाल की भाषा सुंदर तरीके से निकालकर सामने लाती है साथ ही साथ उनके सांग में, उनकी रागिनीयों में साफ झलकती है।

लखमीचंद की भाषा में उर्दू का प्रयोग

हरियाणा की भाषा पर वहां के लोगों की बोली पर उर्दू का एक बहुत बड़ा प्रभाव है जो कहीं ना कहीं हरियाणा में होने वाले सांगों पर उसका असर–सा लगता है और लखमीचंद के भी सांग इससे अछूते नहीं है। दादा लख्मीचंद ने भी अपनी सांगों में बड़ी बखूबी से उर्दू शब्दों का प्रयोग किया है और वह उनकी कई रागिनीयों में, उनकी रचनाओं में साफ झलकता है। कई बार वह मंच से मंचन करते समय स्वयं ही जो अपनी सांगों की रचनाएं करते थे। उनमें उर्दू साफ तौर पर झलकती थी क्योंकि उर्दू वहां की आम बोलचाल की भाषा में मिली–जुली भाषा प्रतीत होती है। हिंदी और उर्दू का हरियाणवी पर एक अच्छा खासा प्रभाव देखने को मिलता है। उसी का असर उनके स्थानों पर भी दिखा जिससे कि वह आम लोगों से सीधे संपर्क साधते थे।

''छम–छम छन न न न करती चाली चाल चाल छबीली ।
लचके तीन पड़ें मुड़–तुड़ के काया कर ली ढीली ॥
होठों पे पानां की लाली बोले बोल रसीली ।
चन्द्रमा सा चेहरा चमक चमक आंख कटीली ॥''

दादा लखमीचंद ने अपने सांगों में बड़ी ही खूबसूरती के साथ अलंकारों का प्रयोग किया है। यदि उनकी भाषा शैली की बात की जाए तो अलंकारों के माध्यम से उन्होंने अपनी रचनाओं को एक नया स्वरूप प्रदान किया है। उपमा और अनुप्रास का सुंदर और सारगर्भित चित्रण उन्होंने बेहद खूबसूरती से व्यक्त किया है।

रोक्या नहीं टोक्या नहीं नल पहुँच गया भवन मैं।
बिजली कैसे पलके लागें गोरे–गोरे तन मैं ।।
राजा का रूप अनमोल, देख के सखी सकी ना बोल ।
जिसका भूरा–भूरा मुख गोल, जैसे चन्दा चमके घन मैं ।
देख के राजा नल की श्यान, कहण लगी तनं खूब घड़ी भगवान ।
दमयन्ती की ज्यान जल गी काम की अगन मैं।"

पंडित लखमीचंद ने अपने सांगों के माध्यम से समाज में फैली भ्रांतियों का खूबसूरत एव सारगर्भित चित्रण किया है –

"अनहद के कपाट खुले अनल हक को पहचान लिया ।
सच्ची नगरी जा बसाई झूठा छोड़ जिहान दिया ।
निर्मल धारा ओ३म श्री हरी ओ३म पवित्र ध्यान किया ।
लखमीचन्द यो उड़े पहुंचग्या ना कदे फेर बावड़ के आवे।।"

पंडित लखमीचंद ने बेशक उच्च शिक्षा प्राप्त न की हो लेकिन उनकी भाषा शैली किसी विद्वान से कम न थी। उनकी भाषा पर यदि आप ध्यान देंगे तो आपको साफ तौर पर नज़र आएगा कि वह हर बार अपनी नायिका के रूप चित्रण में भी सारगर्भित शब्दों का प्रयोग करते थे जो कि बड़े–बड़े विद्वानों के लिए भी एक असंभव–सा कार्य माना जाता है। अलंकारों का जिस प्रकार से उन्होंने सुंदर चित्रण किया है और उनका पूर्ण रूप से लोगों के मनोरंजन के लिए प्रयोग किया है, वह अपने आपमें ही एक बहुत बड़ा गुण है। रोते – बिलखते बालक की परिकल्पना शब्दों में व्यक्त करनी हो या स्त्री का सुख दुख, पंडित जी की दादा लख्मीचंद स्वयं क्योंकि हरियाणा से थे और हरियाणा के लोगों का जो अल्हड़ मिजाज होता है उसका स्वरूप कहीं ना कहीं उनकी रचनाओं में मिलता है। साथ ही साथ जब वह मंचन करते थे अपनी उन्हीं रचनाओं का उन शब्दों का गानों का जब वह स्वयं प्रयोग करते थे मंच पर तब कहीं न कहीं ऐसा लगता था कि हरियाणा के जो लोग होते थे वह भी अपने मिजाज को दर्शाते थे।

लखमीचंद के साहित्य में समाज चित्रण एवं सामाजिक मूल्य

साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है। पंडित लखमीचंद द्वारा रचित सांगों में से अनेकों प्रचलित कथाएं हैं, परंतु उनमें अनेक स्थानों पर हरियाणा के समाज का सुंदर चित्रण हुआ है। उनके अनेक प्रसंगों में कतिपय सामाजिक मूल्यों को भी रेखांकित किया गया है।

लख मीचंद साहित्य में वर्णित सामाजिक चित्रण वैदिक काल से लेकर युग युगांतर में हुए सामाजिक राजनीतिक सांस्कृतिक एवं धार्मिक परिवर्तन से प्रभावित है। इसमें मनु द्वारा वर्णित चतुर्वर्ण सामाजिक ढांचे का वर्णन मिलता है। इसी साहित्य में

अनेक स्थानों पर प्रत्येक वर्ग द्वारा निर्धारित योग्यताओं और उनके द्वारा निष्पन्न कार्य कार्यों का भी उल्लेख किया गया है। स्मरण रहे कि आरंभ में यह वर्ण व्यवस्था अत्याधिक लचीली थी और किसी वर्ग विशेष में शामिल होने का आधार व्यक्तिगत योग्यता थी परंतु जब यह व्यवस्था पैतृक हो गयी तो समाज पतन की प्राप्त हुआ, क्योंकि पैतृक वर्ण व्यवस्था होने पर उसमें निर्धारित कर्तव्यों के निर्वहन के योग्यता वह क्षमता नहीं रही। लखमी चंद ने इस पतनोमुँखी स्थिति को कई स्थलों पर रेखांकित किया है।

समाज में दुराचार ना फैलने पाए संभवत इसी वजह से लख्मी चंद ने भारतीय परंपरा के अनुरूप अनेक स्थलों पर 'जोड़ी के वर' के महत्व को दर्शाया है। सांग 'शाही लकड़हारा' में निम्नलिखित पंक्तियां इसकी साक्षी हैं –

''उस गौरी का के जीणा है जिसका बाल्यम है छोटा''
या
''मैं तै एक बच्चा सूं तनै भरतार चाहूंगा।''

कवि ने विवाह की नैसर्गीक आवश्यकता को स्वीकारते हुए मनुष्य की वंशवृद्धि संबंधी कामना का उल्लेख सांग 'पूर्ण भगत' मे इस प्रकार किया है –

''पति और और पत्नी नर मादा करया मेल चाहवै सै''
''धन हाथा का मैल सभी सन्तान खेल चाहवै सै''

हरियाणवी समाज में सर्वत्र यह धारण पायी जाती है कि अपने से बड़ों का और भले लोगों का सर्वत्र सम्मान होना चाहिए। बड़ों का सम्मान करने से ना तो कोई छोटे दर्जे का प्राप्त होता है और भले पुरुषों का सत्संग करने से कोई छोटा या बुरा नहीं कहलाता। सांग 'पूरण भगत' में लखमीचंद जी ने इस बारे में बताया है –

''बड़े पुरुषों के साथ रहे कोई छोटा नहीं कहावै।
भले पुरुष का सत्संग कर कोये खोट्टा नहीं कहावै।''

जो आदमी भला है और दूसरों के दुःखों को बांटता है, हरियाणवी समाज में उसे ईश्वर तुल्य समझा जाता है। सांग ''ताराचंद'' में लख्मीचंद जी इस बारे में बताते हैं –

'राम बराबर समझणा चाहिए जो औरों के दुःख नै बाटे'

लखमीचंद साहित्य में अनेक स्थलों पर बुरे कामों को त्यागने व अच्छे कर्मों को करने का उल्लेख करते हैं क्योंकि कवि का दृढ़ निश्चय है कि –

''कर्म की रेख कदे ना तालती
 लखमीचंद आयु पल–पल घटती।''

सांग 'चापसिंह' मैं लखमीचंद पुकार पुकार कर कहते हैं –
''लखमीचंद अगत की चेत
ना एक दिन बनै शरीर का रेत।''

लखमीचंद के साहित्य में सांस्कृतिक छटा

हरियाणा की संस्कृति अत्यंत प्राचीन है। इसे भारतीय सभ्यता की जन्मस्थली होने का गौरव प्राप्त है। साहित्य में हरियाणा के प्राचीन जन जीवन का जो चित्रण मिलता है उसके चिह्न आज भी हरियाणा की संस्कृति में चिन्हित किए जा सकते हैं।

लखमीचंद साहित्य में संस्कृति के अनेक आधारभूत तत्व एवं विचार बिंदु रेखांकित किए जा सकते हैं। सांग 'मीराबाई' में विवाह से संबंधित अनेक सांस्कृतिक एवं सामाजिक सूत्रों को निम्न पंक्तियों में उद्घाटित किया गया है –
'मीराबाई ब्याह करवाले बान तेल में न्हाया करिए पांच साथ दिन ब्याह के रहज्यां हंस बनखाड़े खाया करिए।'

सांग 'ताराचंद' में दूल्हे की वेशभूषा का सुंदर चित्रण हुआ है। विवाह के मौके पर दूल्हे को नए परिधान व वस्त्र पहनाए जाते हैं। उसके पांव में 'रखड़ी' हाथ में 'कंगणा' पहनाया जाता है और उसके द्वारा हाथ में लोहे की बैंक कुछ परिवारों में तलवार की धारणा करने का रिवाज है। संदर्भ में निम्नलिखित पंक्तियां दृष्टत्य हैं –

''इस लड़के का ढंग बदल दयो कपड़े नए पहरा कै।
बनडे आला भेष बना दयो सिर पर मोड़ धरा के।।
औल पां कै बांध राखड़ी सोलै कर मै नाला।
खशबोई का तेल मसल दयो होज्या ढंग निराला।।''

पंडित लखमीचंद को सामाजिक व सांस्कृतिक परंपराओं व रीति–रिवाजों की अति सूक्ष्म जानकारी थी। सांग 'ताराचंद' मैं चंद्रगुप्त का धर्मपाल की के साथ विवाह संपन्न होने के पश्चात कवि मां के द्वारा पुत्री को शिक्षा देने की बात को नहीं भूलता। भारतीय संस्कृति में फेरों की रस्म का एक अलौकिक महत्व होता। द्वारा पति–पत्नी शाश्वत गठबंधन में बंध जाते हैं। इसके साथ फेरे हुए वही कन्या का पति है इसी तथ्य के महत्व को निम्न पंक्तियों में दर्शाया गया है –

''चौड़े कालर फूट लिया जो भांडा थारे भ्रम का।
धक्के दे कै ताह दयो नै इब के सै काम शर्म का।।
यह दो काम हु या करै ब्याह मैं बरोठी आर फेरे।
धर्म छोड़ कै अधर्म करते जग मै लोग भतेरे।।''

सांग ताराचंद में विवाहोपरांत समुद्री यात्रा के दौरान नायिका धर्मपाल की और नायक चंद्रगुप्त के बीच हुए वार्तालाप हरियाणा की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि की सुंदर झलक प्रस्तुत करती हैः

शहर के अंदर दुर्गे का मंदिर भवन भी हुया करै से ।
तीर्थ व्रत यात्रा के मै गमन भी हुया करै से।।
कुए प्याउ धर्मशाला पै हरया चमन भी हुया करै से।

संधया तर्पण गायत्री का हवन भी हुया करै से।
ठाडे हिरै गरीबौ की सब सोच्या करै भलाई।।

दादा लखमीचंद विरचित विभिन्न सांगों का विश्लेषण

राजा भोज : सरणदे

राजा भोज : सरणदे सॉन्ग उज्जैन के राजा, राजा भोज तथा नाई देवलदे की पुत्री सरणदे की कहानी है इसमें लखमीचंद जी ने दर्शाया है कि किस प्रकार से परम प्रतापी राजा क्रोध के कारण सरणदे से विवाह करता है तथा उसे अपने राजमहल में त्याग देता है और सरणदे किस प्रकार से सूझबूझ से राजा भोज को मनाती है।

उज्जैन के धर्मात्मा राजा, राजा भोज सदैव ही अपनी प्रजा के सुख–दुख के बारे में सोचते रहते थे जिसके लिए वह रात को खुद गश्त पर जाया करते और लोगों से उनकी दुख दर्द पूछ कर उनको दूर किया करते थे। परंतु एक रात जब राजा भोज गश्त पर नगर भ्रमण के लिए निकले तो नगर में एक एक घर से जोर–जोर से बातें एवं चिल्लाने की आवाजें आ रही थी। वहां पर राजा भोज ने जाकर देखा तो सरणदे तथा उसकी चार सखियां चरखा चला रही थी तथा विवाह और राजा भोज के ऊपर चर्चा कर रही थी। सरणदे ने कहा ''राजा भोज को तो मैं अपने चरणों पर पानी डालने तक ना दूं तो शादी तो दूर की बात है'' ऐसे कटु वचन सुनकर राजा भोज अति क्रोधित हुए और उन्होंने सरणदे को कहा इसका बदला मैं जरूर दूंगा।

तथा अगले दिन राजा ने सरणदे पिता देवलदे नाई को राजमहल बुलावा लिया। और उनसे सरणदे का हाथ मांगा जिसके बाद अति संकोच के बाद देवलदे ने अपनी पुत्री का विवाह राजा भोज से कर दिया। परंतु राजा ने क्रोध के कारण सरणदे को रानी स्वीकार नहीं किया। सरणदे को राजा ने राज महल में ही त्याग दिया। जिसके पश्चात सरणदे बहुत दुखी रहने लगी तथा उसने काग के माध्यम से अपने पिता को संदेश भेजा कि वह यहां बहुत दुखी है तथा आप राज महल के नीचे एक सुरंग बनवा दो मैं आपको घर पर आकर सारी परिस्थितियां समझा दूंगी तथा सरणदे पिता ने ऐसा ही किया।

कुछ समय के बाद सरणदे एक सपेरन का भेस बनाकर वह बहुत अच्छी तरह मीठी बीन बजाते हुए नगर में घूम रही थी जिसके पश्चात उसे राज महल में भी बीन बजाने के लिए आमंत्रित किया गया। सरणदे ने वह भी बहुत अच्छी एवं मीठी बीन बजाई उसके बाद राजा भोज उस बीन की धुन से बहुत प्रसन्न हुए तथा उन्होंने बहुत बहुत प्रशंसा की वीणवादक की बिन बादल कुछ समय पश्चात दरबार में ही बेहोश हो गया। होश में आने के बाद राजा भोज ने उससे पूछा तुम्हें क्या हो गया था। उसने कहा महाराज मानो आप के महल के नीचे आग सी लगी हुई है जिसके कारण

मेरे पाऊं जल गए। राजा भोज ने कहा मैं इसमें क्या सहायता कर सकता हूं तुम्हारी सरणदे कहा महाराज जी यदि आप मेरे पैर पर जल डाल दें तो मेरे पैर ठीक हो जाएंगे। जिसके पश्चात राजा भोज समझ गए कि वह बीनवादक और कोई नहीं बल्कि सरणदे है।

सरणदे की कला और चतुराई को देखकर राजा भोज बहुत खुश हुए और उन्होंने सरणदे को अपने गले लगा लिया। और अपने राज महल में जाकर उसे रानी बनाकर रखा।

चंद्रकिरण

चंद्रकिरण सांग में पंडित लखमी चंद जी ने मदनपुर राज्य के राजा मदनसैन और उनकी रानी नागदे के दांपत्य जीवन का वर्णन किया है कि किस प्रकार से कंचनपुर की राजकुमारी चंद्रकिरण के कारण मदनपुर के राजा अपनी महारानी को छोड़ देते हैं तथा उन्होंने यह दर्शाने की कोशिश की है की आशिकी किस प्रकार से दांपत्य जीवन का विनाश कर देती है स्थान के माध्यम से पंडित लख्मीचंद इस को दर्शाने का प्रयास करते हैं।

मदनपुर में एक समय एक फोटू वाला अपनी सभी फोटू बेचने आता है उन फोटू में मदन सैन चंद्रकिरण की फोटू देखते हैं और वह उस पर मोहित हो जाते हैं।

राजा मदनसैन फोटू पर इस कदर दीवाने होकर चंद्रकिरण को पुकारने लगते हैं। उनकी यह दशा देखकर रानी नागदे वहां आ जाती हैं और मदनसैन को समझाने की कोशिश करती हैं। पर चंद्रकिरण के मोह में मोहित राजा मदनसैन कहते हैं मैं राजा हूं मैं कुछ भी करूंगा। मेरे रास्ते में आने की कोशिश मत करना। परंतु इसके बावजूद भी रानी फिर भी राजा को समझाने की कोशिश करती है परंतु राजा की बुद्धि पर कोई असर नहीं होता उसने अपने पति की हालात को पहले ही भांप लिया था। परंतु वह नहीं माना वह अपनी रानी नागदे को ठुकरा कर राजपाट को छोड़कर कंचनपुर की तरफ चल देता है। तभी उसे रानी नागेद उसे कहती है कि कभी वक्त पढ़ने तो मुझे याद कर लेना मैं भीड़ पड़ी में जरूर आपकी काम आऊंगी पर मदनसैन अपनी आशिकी में चलता चला जाता है।

मदनसैन चलते चलते गहरे जंगल में जा पहुंचता है जहां उसे साधुओं का धूणा दिखाई दिया मदनसैन ने जाकर महात्मा के दर्शन किए और उनसे कहने लगा हे महात्मा में आपके शरण में आया हूं अब आप मेरा उद्धार कीजिए तथा वह अपने हठ पर आ गया उसका यह हट देखकर के महात्मा ने उसके कानों में कुंडल डाल दिए उसे भगवाँ वस्त्र प्रदान किया, एक झोली और चिमटा दे दिया।

अब मदनसैन बाबा के रूप में कंचनपुर की सीमा मैं जा पहुंचा। जहां पर उसने एक बुढ़िया से राजकुमारी चंद्रकिरण के महल का पता पूछा। तथा उसके पश्चात वह चंद्रकिरण के महल जा पहुंचा। उसके बाद उसने चंद्रकिरण के महल के सामने ही धूणा लगा देता है। आप बाबाजी के धुने का धुआं महल की खिड़कियों में से चंद्रकिरण

के कमरे में भर जाता है जिससे परेशान होकर के राजकुमारी अपनी दासी को बाबा को समझाने के लिए भेजती है परंतु बाबा जी वहां से नहीं जाते तथा मदन सेन राजकुमारी चंद्रकिरण को एक झलक देख भी लेता है तथा बाबा को देखने के बाद चंद्रकिरण भी उस पर मोहित हो जाती है। जिसके पश्चात चंद्रकिरण दासी को कहने लगती है, कि अब इस बाबा को धूणा उठाने के लिए मत कहना क्योंकि साधु शराब दे देते हैं और उनकी वाणी सच्ची होती है। जिसके बाद चंद्रकिरण कदम नीचे को लटका कर अपने महल में सो गई थोड़ा सा अंधेरा हुआ तो बाबाजी कदम पकड़कर चंद्रकिरण के महल में आप पहुंचते हैं तथा वहां से जाते समय महल के सिपाही उन्हें देख लेते हैं और उन्हें बंदी बना लेते हैं।

इधर रानी नागदे स्वप्न में देख लेती है। की राजा मदनसैन संकट में है। जिसके पश्चात वह सपेरन का भेस लेकर चंद्रकिरण के राज्य पहुंच जाती है तथा उनके धुन सुनकर सभी अति प्रसन्न होते हैं तथा इसके पश्चात राजा नारायण सिंह नागदे को महल में बीन बजाने के लिए बुलाते हैं परंतु वह इच्छा प्रकट करती हैं कि मेरी धुन सुनने के लिए सभी प्रजा सभी सैनिक तथा बंदी इत्यादि होंगे तो ही मैं अपनी धुन सुन आऊंगी तथा उनकी इच्छा स्वरूप वहां सब को बुलाया जाता है। नागदे जब अपनी धुन सुन आती हैं उसके पश्चात राजा उन्हें वर मांगने के लिए कहते हैं तो वह मदनसैन को छोड़ने की इच्छा प्रकट करती हैं तथा मदनसैन और राजकुमारी चंद्रकिरण के विवाह का प्रस्ताव भी रखा जिसे राजा ने स्वीकार कर लिया।

राजा नारायण सिंह ने राजकुमारी चंद्र किरण को डोली में बिठाया और मदनपुर के लिए रवाना कर दिया परंतु चंद्रकिरण और मदनसैन के बीच महारानी नागदे को लेकर के नोकझोंक शुरू हो गई जिसके पश्चात मदनसैन ने चंद्रकिरण को बहुत समझाया परंतु उसने कोई बात नहीं मानी चंद्रकिरण नहीं मानी। और कहती रही मेरा अभी भी कुछ नहीं बिगड़ा अगर तुम नागेद को नहीं त्यागो गे तो मैं वापस अपने राज्य चली जाऊंगी। चंद्रकिरण अपने हठ पर अड़ी रही। मदनसैन उस पर आशिक था। इसलिए उसने नागदे का सर काट दिया और चंद्रकिरण को लेकर अपने राज्य चला गया।

चीर पर्व

'चीर पर्व ' महाभारत के 18 पर्वों में से एक पर्व है । इसमें कौरवों और पाण्डवों के बीच जुए खेले जाने एवं पाण्डवों के हार जाने का प्रसंग दिखाया गया है । इसमें जुए में हारने के बाद पाण्डवों के साथ कौरवों द्वारा किये गये अन्याय को बखुबी तरीके से दिखाया गया है

प. लखमीचंद कहते हैं कि यही कर्म का लेख था , यही विधाता का लिखा हुआ था कि कौरवों के छल–कपट के कारण पाण्डवों को इतना दुख सहना पड़ रहा है । शकुनी , दुर्योधन आदि ने युधिष्ठिर और अन्य पाण्डवों को हराने , लज्जित करने और साम्राज्य से बाहर निकालने का मार्ग जुए के माध्यम से निकाला । तथा उसके पश्चात धृतराष्ट्र को प्रसन्न करके पाण्डवों के साथ जुए का खेल शुरु किया । जिसमें

कौरवों के छल–कपट के कारण पाण्डव अपना धन , दौलत , राज–पाट सब हार गये ।

उसके पश्चात् दुर्योधन ने पाण्डवों को लज्जित करने और द्रोपदी से बदला लेने (क्योंकि द्रोपदी ने दुर्योधन को अन्धे का अन्धा कह दिया था) के लिये द्रोपदी को दासी के रुप में सभा में उपस्थित होने का आदेश दिया एवं पृतकामी दास को भेजा ।

सभा में आने के पश्चात् दुर्योधन की बातों का अनुसरण न होने और उसका अपना होने पर वह क्रोधित हो जाता है तथा क्रोधवश द्रोपदी को वस्त्रहीन करने का आदेश देता है । तब द्रोपदी सारी सभा से प्रश्न करती है कि जब मेरे पति पहले ही जुए में हार गये हैं तो उनका जुआ खेलने का अधिकार कहां रह गया ? और उनके बगैर मुझे और कोई भी जुए मे नहीं लगा सकता क्योंकि मैं एक पतिव्रता स्त्री हूँ । इस सवाल का किसी के पास कोई जवाब नहीं था ।

जब द्रोपदी का साथ सभा का कोई व्यक्ति नहीं करता तो वह भगवान श्री कृष्ण से अरदास करती है । तब श्री कृष्ण उसका चीर बढाकर असीम कर देते हैं और उसकी रक्षा करते हैं ।
लखमीचंद कहते हैं कि जिस प्रकार श्री कृष्ण ने सावित्री , अनुसुईया , अहल्या , तारा , आदि का साथ उसी भांति द्रोपदी का साथ देकर उसकी लाज बचाई ।

एक पुरुष की मनमानी , स्वेच्छाचारिता और नारी की कारुणिक दशा को चित्रित कर प. लखमीचंद समाज को यही शिक्षा देना चाहते हैं कि पति पत्नि का पारस्परिक सौहार्द्र , सुख दुख को साझा करने की भावना तथा परस्पर अटूट विश्वास ही परीवार के मूलाधार हैं । 'चीर पर्व ' में द्रोपदी की बेबसी , पीड़ा और समाज में प्रबल पुरुष के प्रतिनिधि दुशासन की नीचता समस्त सीमा लांघ चुकी है –

" असुर कैसा भेष केश कै मरोड़ डाले ।
के लैगी पर्दा ताण कै चल दासी बन के रहलै ।"

भरी सभा में अपमानित हुई द्रोपदी अस्तित्व रक्षण हेतु उपस्थित जन समुदाय से सहायता की भीख माँगती है । हर तरफ से निराश हो , स्वयं को सामाजिक शोषण का शिकार जान कर , नारी को अनेक बन्धनों में बन्द करने वाले पुरुष समाज के प्रति अपने आक्रोश को व्यक्त करती है । यहां द्रोपदी में 21 वीं शताब्दी की विद्रोहिणी नारी की प्रतिशोधी भावना नजर आती है –

" मैं के एक बीर दुनिय मै तुम सारे बहू बेटी आले हो
बांस की ज्यू मन तिड़ते देखे , आपस म मैनें लड़ते दिखै
कोई दिन में मैनें भिड़ते दिखै , इस हस्तिनापुर में ताले हो
लखमीचंद जग के लोग हसैगे , आपस कै मै बांस खसैगे
इस हस्तिनापुर में गिद्ध बसैगे , कोए दिन मै कोव्वे काले हो।"

सेठ ताराचंद

दिल्ली का सेठ ताराचंद प्रसिद्ध दानी था। उसके घर से कभी कोई इंसान बगैर दान के नहीं गया। वह गरीबों की सेवा करता था। राहगीरों के लिए जल व भोजन का प्रबंध करता था। सेठ ताराचंद का बड़ा भाई हरिराम था। एक दिन हरिराम ने अपने भाई ताराचंद से कहा कि वह पैसे की कीमत नहीं समझता और इस पैसे को बर्बाद कर रहा है। हरिराम ने ताराचंद को दान नहीं करने की सलाह दी। अपने भाई की सलाह पर सेठ ताराचंद ने दान करना बंद कर दिया। दान बंद करने से उसके घर में टोटा आ गया। समुंद्री जहाज डूब गए। कोठी में चोरी हो गई और एक कोठी जल गई। टोटे की वजह से उसे अपना बेटा चंद्रगुप्त अपने दोस्त हापुड के सेठ मंशाराम के पास गिरवी रखना पड़ा था। सेठ ताराचंद के भाग–2 का सांग शुरू किया। सेठ ताराचंद के बेटा चंद्रगुप्त जब व्यापार के लिए गया हुआ था तो वहां एक सेठ के काणे लड़के का विवाह था। सेठ ने अपने काणे बेटे की जगह चंद्रगुप्त को फेरे के लिए भेज दिया। इस प्रकार चंद्रगुप्त व धर्ममालकी का विवाह हो गया। जब धर्ममालकी को सेठ अपने काणे लड़के के साथ ले जाने लगा तो धर्ममालकी ने इसका विरोध किया और कहा कि जिसके साथ उसके फेरे हुए हैं। वह उसी की धर्ममालकी बनेगी। इस प्रकार चंद्रगुप्त व धर्ममालकी जहाज में हापुड के लिए चल पड़ते हैं। यहां पंडित जी ने अपनी रचना में बताया कि चंद्रगुप्त अपनी पत्नी धर्ममालकी को जहाज में छोड़कर हापुड आ जाता है और मंसा सेठ को व्यापार का हिसाब देता है।

चंद्रगुप्त के पिता सेठ ताराचंद दान पुण्य किया करते थे। जिससे उनके यश में निरतर वृद्धि हो रही थी। उनके एक मित्र ने ईष्या के कारण उसका दान पुण्य बंद करवा दिया था। धर्म से विमुख होने पर उसके कारोबार में घाटा आना शुरू हो गया। कुछ दिनों बाद सेठ तारा चंद के चार जहाज समंदर में डूब गए व घाटे के कारण उसका कारोबार बंद हो गया। उसके पास दान तो दूर की बात है खाने के लिए भी कुछ नहीं बचा। अधिक कर्ज में दबने पर उसने अपने छह वर्षीय पुत्र चंद्र गुप्त को हापुड़ में मनसा सेठ के यहां गिरवी रखने का फैसला लिया। सेठ ताराचंद अपने इकलौते पुत्र चंद्रगुप्त को मनसा सेठ के यहा गिरवी रखने के लिए ले जाता है। कलाकार ने रागनी के माध्यम से दर्शकों को सुनाया कि सेठ ताराचंद अपने लड़के को मनसा सेठ को सौंपते हुए कहता है कि टोटे में मरूसूं मेरी दया कर ले, एक चीज सै अनमोल इसनै गहना धर ले। उसने अपने पुत्र को महज 200 रुपयों में मनसा सेठ के यहा गिरवी रख दिया।

धर्ममालकी एक साधू के वेष में दिल्ली आ जाती है। वह एक जंगल में साधु के वेष में तप करने लगती है। यहां एक दिन चंद्रगुप्त का पिता सेठ ताराचंद भी साधु से मिलने आता है। वह सेठ ताराचंद को कहती है कि सुबह इस धूणे से कुछ ले जाना। जब ताराचंद सुबह धूणे की राख टटोलता है तो उसमें एक सोने का कंगन मिलता है। सोने के कंगन को बेचकर सेठ ताराचंद अपने बेटे को गिरवी से मुक्त कराकर घर लाते है। जब घर में उसने साधू के वेश में अपनी पद्यी धर्ममालकी को देखा तो काफी प्रश्न होता है।

सांग में दर्शाया गया की दान पुण्य बंद करने पर सेठ ताराचंद का परिवार की किस तरह बर्बाद हो जाता है। दान पुण्य बंद करने पर उसे अपना इकलौता पुत्र गिरवी रखना पड़ा था। उन्होंने सांग के माध्यम से लोगों को जीवन में सामर्थ्य के

अनुसार दान पुण्य करने के लिए प्रेरित किया। सेठ ताराचंद था प्रसिद्ध दानी, दान करना बंद किया तो कंगाल हो गया।

नल दमयंती

राजा नल चरित्र ब्रहदस ऋषि महाराज युधिष्ठिर को समझा रहे थे कि अरे को नल दमयंती का चरित्र खोलकर सुनाने का कष्ट करो अब ऋषि जी सारी कथा सुनाते हैं।

राजा नल का चरित्र ब्रहदस ऋषि ने कुंती पुत्र युधिष्ठिर को तब सुनाया था जब वनवास के दिनों में पांचो पांडव द्रोपदी सहित वन में विचरण कर रहे थे । ब्रहदस को देखकर युधिष्ठिर अपना दुख सुनाने लगते हैं तब ऋषि ने धैर्य रखा कहा, मन छोटा मत करो वह बताते हैं कि तुम से भी दुखी और राजा नल था और उसने हिम्मत नहीं हारी थी।

एक दिन राजा नल ने हंसों को जाते देखा वह उनकी सुंदरता से मोहित हो गया। राजा ने हंसों को पकड़ने का प्रयास किया तो एक हंस पकड़ में आ गया वह हंस राजा नल से कहने लगा कि राजा भीमसेन की पुत्री दमयंती तुम्हारे समान है अगर तुम मुझे छोड़ दो तो मैं उससे तुम्हारे जोड़ी मिला दूंगा। साथियों के पास चला गया अंशु को दमयंती अपने बगीचे में देख अत्यंत प्रसन्न हुई उसने एक हंस को पकड़ा वह हंस जो राजा नल ने छोड़ा था हंस ने राजा नल के बारे में दमयंती से कहा, दमयंती राजा नल का नाम सुनके चौंक गई।

दमयंती को बेचौन देखकर उसकी मां उसकी शादी के बारे में राजा भीमसेन से कहती है और भीमसेन उसके स्वयंवर का ऐलान कर देता है। दमयंती के सावर की खबर सबको पता चली इंद्र अग्नि वरुण और यमराज भी वहां उपस्थित थे। नारद जी के समाचार मिलते ही चारों स्वयंवर में भाग लेने चले गए वह राजा नल की सुंदरता को देखकर उनका मुंह पीला पड़ गया । उन्होंने सोचा नल को दूध बनाकर महल में भेजते हैं जिससे दमयंती सोचेगी कि वह गुलाम है और उससे शादी के योग्य नहीं है। उन्होंने नल से कहा उनका एक काम अटक गया है वह जाकर कर दें देवताओं ने उसे कहा कि वह किसी को नजर नहीं आएगा परंतु उसको सब नजर आएंगे। घर में नल को देखकर दमयंती चकित सी रह गई। सोचने लगी कड़े पहरे के बावजूद भी यह काम देव जैसे सुंदर पुरुष महल में कैसे आ गया। दमयंती ने उनसे बात की और जब उसको पता चला यह राजा नल है तो उसकी खुशी का ठिकाना नहीं रहा।

राजा नल का विवाह दमयंती के साथ बड़ी धूमधाम से हुआ। देवताओं ने नल के ऊपर प्रसन्न होकर आठ वरदान दिए। वरदान देकर देवता स्वर्ग लौट रहे थे तो वहां उन्हें कलयुग मिला कलयुग को सेवर में शामिल होना था। परंतु स्वयंवर हो गया सुनकर व क्रोध में आ गया और नल को मजा चख आने की बात करने लगा। देवताओं ने उसे समझाया फिर भी वह अपनी जीत पर था।

कलयुग ने नल के भाई पुष्कर को जुआ खेलने के लिए प्रोत्साहित किया और नल की हार के बदले उसको वनवास देखने वह स्वयं राजा बनकर राज करने को

कहा यह सुनकर खुश करने नल को चुनौती दे दी ।परंतु दमयंती नल को जुआ खेलने से मना किया।

नल दमयंती की बात अनसुनी कर दी और पुष्कर की चुनौती स्वीकार की। बाजी बिछ गई खेल शुरू हो गया। नल बाजी हार जाता है। दमयंती नल का साथ छोड़ने से इंकार कर देती है दिल कहता है अगर तुम नहीं जाना चाहती तो बच्चों को उनके नाना के पास छोड़ दो। दोनों बच्चों के चले जाने पर नल और दमयंती बहुत दुखी होते हैं। तब पुष्कर नल से कहता है तुम अभी तक शहर छोड़कर नहीं गए राजा नल दमयंती को कुटी में सोता छोड़ने को सोचता है। ताकि वह अपने पिता के घर चली जाए और उसको नल के साथ दुख न झेलना पड़ेद्य

विराट पर्व

विराट पर्व प. लखमीचंद द्वारा रचित एक सुप्रसिद्ध सांग है । इस सांग में महाभारत की कथा का प्रसंग लिया गया है , जिसमें पाण्डव बारह वर्षों के वनवास के बाद अपना तेरहवां वर्ष अज्ञातवास के रुप में बिताने के लिये राजा विराट के यहां पर शरण लेते हैं ।

युधिष्ठिर 'कंक' के नाम से राजा को चोपड़ सिखाने लगे , अर्जुन बुहन्नला के नाम से राजा की पुत्री उत्तरा को नृत्य सिखाने लगे , भीम बल्लव के नाम से रसोइया बन गया , नकुल ग्रंथिक नाम से घुड़शाला व सहदेव तन्तिपाल नाम से गौशाला में काम करने लगे । तथा द्रोपदी सैरन्ध्री नाम से पटरानी सुदेष्णा की दासी बन गई । एक बार सुदेष्णा का भाई कीचक आता है और वह वहां पर सैरन्ध्री को देखकर उसके मोह पर मुग्ध हो जाता है तथा उसके सामने प्रेम का प्रस्ताव रखता है । परन्तु सैरन्ध्री उसका प्रस्ताव ठुकरा देती है । और कीचक को कहती है की तु राजा है और मैं प्रजा , हमारा सम्बन्ध बाप बेटी का है –

"राजा ने प्रजा तकणी चाहिये धर्म का खाता करकै ।
मैं रैयत बण कै शरमाऊं तेरा बाप का नाता करकै ।। "

लेकिन कीचक अपनी बहन से उसकी बुराई करता है और कहता है कि ये औरत अच्छी नहीं है इसे अपने महल से बाहर कर दो । अन्त में थक हार कर सुदेष्णा निश्चय करती है कि वह सैरन्ध्री को कीचक के महल में भेज देगी । तत्पश्चात वह मदीरा के बहाने उसे कीचक के महल में भेजती है ।

सैरन्ध्री कीचक के महल में जाने से पुर्व सारी कथा भीम को बता देती है , तब भीम कहता है कि तुम उसे समझाने का प्रयास करो , अगर वह ना समझे तो उसे रात को नृत्यशाला में मिलने का वादा करके आ जाना । सैरन्ध्री ऐसा ही करती है । जब कीचक मध्यरात्रि आता है तो भीम के साथ् मल्ल युध्द होता है जिसमें कीचक मारा जाता है ।

अन्तिम प्रसंग में अभिमन्यु का विवाह विराट की पुत्री उत्तरा से हो जाता है । तब द्रोपदी पाण्डवों को उल्लाहना देती है कि हमार घर नहीं , रहने–खाने का ठीकाना नहीं है तो इसे कहां रखोगे । तब युधिष्ठिर उपदेश देते हैं कि ईश्वर में विश्वास रखो वह सब कुछ देता है । सब का पालनहार वही है , कर्म के अनुसार सबको फल मिलता है –

"सहम फिकर करो इन बातां का कौण उलहाणादे सै ।
कर्मा के अनुसार रामजी पीणा – खाणा दे सै ।।
यू रोम– रोम मैं रम्या रहे न्याय इन्साफ करे तै
लखमीचंद उपहार बख्त पै यो पाणी दाणा दे सै । "

हूर मेनका –

हूर मेनका पर अगर विचार किया जाय तो ये स्पष्ट परिलक्षित होता है कि ये पौराणिक कथाओं पर पूर्णतः आधारित पौराणिक और ऐतिहासिक सांग है जैसा सांग के कथा भूमि में अक्सर होता है। इन नाटकों को दर्शक अक्सर पसंद करते है क्योंकि पौराणिक संदर्भ की उनकी व्यापक समझ सामाजिक सरोकार से जुड़ती हैं। यह सांग पुरानी कथा पर आधारित जिसमें विश्वामित्र के तपस्या का कारण देवराज चिंतित होते हैं और विश्वामित्र के तपस्या को भंग करने के लिए देवराज इंद्र मेनका को नीचे भेजते हैं और मेनका अपने प्रयासों में सफल हो कर विश्वामित्र का तपस्या करने मे सफल हो पाती हैं और फिर विश्वामित्र के साथ मिलकर मेनका को पुत्री भी हो जाती है लेकिन तत्पश्चात देवराज के आदेश के कारण वह फिर स्वर्ग लोक को छोटी सी बालिका को छोड़कर चली जाती हैप् बालिका को कणव ऋषि उठाकर अपने आश्रम लाते हैं इसकी रक्षा शकुंत पक्षी के द्वारा की गई थी इसीलिए उसका नाम शकुंतला रकखा जाता है वही शकुंतला आगे चलकर राजा दुष्यंत की पत्नी होती है और भरत की मां होती है वहीं भरत जिससे कारण हमारा देश भारत कहलाया। तो कहीं ना कहीं पौराणिक तौर पर शुरू हुई यह कथा एक ऐतिहासिक मोड़ पर खत्म होती है जिसका सत्य से संबंध है । आता यह सॉन्ग अस्पष्ट करता है की कैसे सत्ता को बचाने के लिए देवता भी किसी भी साम दाम दंड भेद के नीति को अपना सकते हैं और दूसरी तरफ

रघुबीर सिंह धर्मकौर

इस सांग के माध्यम से लखमीचंद ने समाज में व्याप्त मानसिक विसंगताएँ जैसे लोभ लालच ईर्ष्या और धन हेतु किसी भी स्थिति में जा सकने की मानसिकता का चित्रण किया है। यहां लखमीचंद ने सामाजिक यथार्थ का चित्रण किया है संपत्ति को लेकर चिरकाल से समाज में दो पक्षों के बीच विवाद की स्थिति बनी रहती है खासकर जब रिश्ते नाते में संपत्ति का बंटवारा हो और जब इंसान गलत दिशा में सोचने को अग्रसर हो जाता है तब उसके सामने कोई भी रिश्ते नाते का मोल नहीं रहा जाता यहां पर हमें लख्मीचंद के आधुनिक सोच का भी परिचय मिलता है जहां पर उन्होंने यह स्पष्ट किया है कि विवादों का निस्तारण कैसे न्यायसंगत तरीके से होना चाहिए और इस बात पर भी जो डाला है की सत्य परेशान हो सकता है लेकिन पराजित नहीं। सांग में यह भी दर्शाया गया है कि कैसे वैवाहिक जीवन में बंधने के

बाद परिस्थितियां बदल जाती है और पुराने रिश्ते नातों में बदलाव आना एक सामाजिक सत्य है। रघुवीर का पालन पोषण उसके मौसी से और मामा ने ही किया था उसके बाद जब उसकी शादी धर्मकोट से करा दी जाती है तब रघुवीर के समझाने के बावजूद भी और धर्म कौर की पूर्ण रूप से गलती ना होने के स्थिति में भी रिश्ते नाते पूर्ववत नहीं रह जाते हैं।

चाप सिंह

प्रस्तुत सांग में पं० लख्मीचंद ने बादशाह शाहजहां के समय हुई घटना को दर्शाया है। सांग चाप सिंह में नायिका सोमवती की निर्दोष होते हुए भी वक्त के हाथों कड़ी परीक्षा ली गयी चाप सिंह ने ड्यूटी पर हाजिर होने से पूर्व अपनी सुशील और चरित्रवान पत्नी को सावधान रहने का निवेदन किया।

छः महीने के पश्चात शेरखान और चाप सिंह के बीच इस बात पर शर्त लग गयी की सोमवती पतिव्रता है या नहीं और जो भी व्यक्ति शर्त हारेगा उसको फांसी मिलेगी। अपनी बात को सिद्ध करने के लिए दोनों को पंद्रह दिनों का समय दिया गया। उस पर शेरखान ने एक दासी को रिश्वत दे कर सोमवती के पास बुआ बना कर भेजा उसके द्वारा शेरखान ने सोमवती का फटका और कतर चोरी करवा लिए। ये चीजें सोमवती को अपने चाप सिंह की प्रेम की निशानी के रूप में मिली थीं। इस दुती ने अपने हाथों से स्नान करने के बहाने सोमवती की जांघ का तिल देख लिया। फिर शेरखान ने फटका – कटार और सोमवती की जंघा तिल की बात दरबार में बता कर विजयी घोषित कर दिया। शर्त अनुसार तय हुआ की दो दिनों के बाद चाप सिंह को फांसी दे दी जाय। इस पर दो दिन की छुट्टी मांग कर चाप सिंह घर आया और सोमवती को दुत्कारा–फटकारा। सोमवती ने निर्दोष होने के तर्क दिए परन्तु चाप सिंह को विश्वास नही हुआ और वह वापस लौट गया।

उसके बाद नृत्यकला निपुण सोमवती ने नटों की सहायता से बादशाह के समक्ष नृत्य का कार्यक्रम प्रस्तुत किया बादशाह ने प्रसन्न हो कर मुंहमांगा इनाम मांगने को कहा तो सोमवती ने अपने गुनहगार शेरखान पठान को उसके हवाले करने कही इस पर क्रोध में पागल हो कर शेरखान बोला ''मैंने तो कभी इस औरत की शक्ल भी नहीं देखी'' सोमवती ने उससे पुछा ''जब तूने कभी मेरी शक्ल भी नहीं देखी, तो मेरी जंघा का तिल कैसे देख लिया?''
तब सारा भेद खुला तो बादशाह ने चाप सिंह को सम्मान पूर्वक छोड़ दिया और शेरखान को फांसी की सजा दी।

पद्मावत

पद्मावत सांग एक प्रेमगाथा है, जो आध्यात्मिक स्वरूप में है। 'पद्मावत' रत्नसेन और पद्मावती (पद्मिनी) की प्रसिद्ध ऐतिहासिक कथा पर आधारित है। इस सांग में सिंहलद्वीप की राजकुमारी पद्मावती और चित्तौड़ के राजा रत्नसेन के प्रणय का वर्णन है। सांग के द्वितीय भाग ऐतिहासिक है, जिसमें चित्तौड़ पर अलाउद्दीन खि़लजी के आक्रमण और 'पद्मावती के जौहर' का सजीव वर्णन है।

''पद्मावत में चित्तौड़ के राजा रत्नसेन और सिंघलद्वीप की राजकुमारी पद्मावती की प्रेम कथा का वर्णन है।''

पद्मावती के पास हीरामन नाम का एक बोलता हुआ तोता था। एक दिन पद्मावती की अनुपस्थिति में अचानक बिल्ली के हमले से बचकर वह तोता भाग निकला और एक बहिलिए के जाल में फंसा गया। बहेलिए से उसे एक ब्राह्मण ने खरीद लिया जिसने चित्तौड़ आकर उसे राजा रत्नसेन के हाथ बेच दिया।

एक दिन रत्नसेन के शिकार पर जाने के बाद हीरामन के मुंह से ''पद्मावती'' की तारीफ सुनकर रत्नसेन की रानी ''नागमती'' अंदर ही अंदर पद्मावती से नफरत करने लगी। उसने हीरामन को मारने का आदेश एक नौकरानी दिया लेकिन राजा के डर से नौकरानी तोते छुपा दिया। शिकार से वापस आने पर रत्नसेन तोते के बिना परेशान हो गए। आखरी में नौकरानी ने तोते को राजा के सामने ला दिया। रत्नसेन ने तोते से पद्मावती की सुंदरता का वर्णन सुना। शादीशुदा होने के बावजूद पद्मावती की कल्पना में रत्नसेन खो गया। अनेक प्रकार की कठिनाइयों को झेलते हुए अंत में पद्मावती को प्राप्त करने में सफल हुआ। बाद में ''अलाउद्दीन'' भी पद्मावती को पाने की इच्छा जग जाहिर की। कई बार दोनों के बीच संघर्ष होने के बाद अंत में रत्नसेन ने कुंभलनेर पर आक्रमण कर दिया। अलाउद्दीन और रत्नसेन के बीच संघर्ष हुआ। इस युद्ध में रत्नसेन मारा गया। उसका जिस्म चित्तौड़ लाया गया। नागमती और पद्मावती शव के साथ सती हो गई।
इस सांग में पद्मावती एवं रत्नसेन की लौकिक प्रेम कहानी के द्वारा अलौकिक प्रेम की व्यंजना की गयी है।

हीर राँझा

प्रस्तुत सांग में हीर राँझा की प्रेम कहानी को चित्रित किया गया है जो की पंजाब की वादियों में गूंजती है। हीर का जन्म पंजाब प्रांत के झंग में हुआ और रांझा पुराने पंजाब के तरवत हजारा कस्बे में हुआ। दोनों जन्मों–जन्मों के प्रेमी हैं। दोनों जब जवान हुए तब उनका मिलन स्वप्न में होता है।

राँझा अपना गाँव छोड़कर हीर के भाई पटमल जागीरदार की भैंसों का पालन करने लगता है अब हीर–रांझा रोज मिलते हैं। उनका प्रेम गहरा होता जाता है। हीर के भाई पटमल को जब इस प्रेम प्रसंग का पता चलता है तो वह हीर की शादी एक आँख के काने अखन जागीरदार से कर देता है हीर बहुत रोती हुई विलाप करती है हीर के विरह में।

रांझा फकीर बनकर उसके ससुराल में सादक पीर में ठहर जाता है। हीर जब दुल्हन के रूप में सादक ढोकने आती है तब दोनों ही प्रेमी एक दूसरे को पहचान लेते हैं। हीर घर जाकर सांप के काटे जाने के बहाने रांझे को घर बुलवा लेती है और दोनों अवसर पाकर रात को भाग जाते हैं।

पूरणमल

सज्जनों पंजाब प्रांत के साल कोर्ट शहर में राजा सुलेमान राज करते थे। उनकी दो रानियां थी। बड़ी का नाम इच्छरादे और छोटी का नाम नणादे था। परंतु और राजा की कोई संतान नहीं थी। भगवान की कृपा से एक बार गुरु गोरखनाथ उस शहर में आ गए। राजा और रानी ने उनकी खूब सेवा की। सेवा से प्रसन्न होकर गुरु गोरखनाथ ने इच्छरादे को पुत्रवती होने का वरदान दिया और पुत्र का नाम पूरणमल रखने को कहा। पुत्र का जन्म होने पर राजा सुलेमान ने उसे 12 साल तक बारे में रखा। वही उसकी पढ़ाई लिखाई का प्रबंध कर दिया गया। 12 साल के बाद पूरणमल को घर से निकाला गया। उसके रूप और गुणों के चर्चे दूर–दूर तक फैल गए तो उसके रिश्ते के लिए बड़े–बड़े राजाओं के संदेश आने लगे। राजा ने सोचा अब पूरणमल की शादी कर देनी चाहिए। उसने पूरणमल को बुलाकर कहा कि बेटा तेरी 360 सगाई आ चुकी है। अब तू जहां चाहे वहां शादी कर ले। पूरणमल शादी के लिए नहीं मानता तो रूपेशाह दीवान पूरणमल को समझाता है कि शादी के बिना काम नहीं चलता। शादी तो एक न एक दिन करनी ही होगी तो पूरणमल कहता है यह सब मोह माया है। अपने पिता की बात सुनकर पूरणमल कहने लगा कि पिताजी आपने उन लोगों के नाम नहीं बताया जो सदा मोह माया के बंधन से दूर रहे सलेमान कहने लगा माया से कोई नहीं बच सकता इसलिए तुम भी
शादी करके वह इस बेल को बढ़ाओ। पूरणमल कहने लगा कि पिताजी मैं शादी नहीं करूंगा।

अपने अपने पुत्र की बात सुनकर राजा सुलेमान उसे फिर समझाते हैं कि बेटा शादी तो बड़े–बड़े ऋषि मुनियों ने भी की थी । गृहस्थाश्रम जीवन का सबसे बड़ा आश्रम है और मैं तुम्हारा पिता हूं भला मैं तुम्हारा अहित क्यों चाहूंगा ,पिता की आज्ञा का पालन करना भी पुत्र का कर्तव्य है।

जब पूरणमल किसी भी तरह शादी करवाने के लिए तैयार नहीं होता तो राजा सुलेमान कहता है बेटा कोई बात नहीं है एक दिन तू शादी करवाने के लिए कहेगा ।अब जा अपनी दोनों माताओं से मिल आ। एक तुम्हारी जन्म की माता है और दूसरी तुम्हारी कर्म की। पहले अपने धर्म की माता के चरण स्पर्श करो। पिता की आज्ञा मानकर अपनी धर्म की मां (मौसी) छोटी रानी नणादे से मिलने जाते हैं। पूरणमल का नाम सुनते ही नारा दे भागकर आई। पूरणमल के रंग रूप और जवानी को देखकर उसके होश ठिकाने नहीं रहे।

पूरणमल महल से जाने की जिद करता है। वह उसको धामकी देकर रोकती है। जब राजा महल में आता है तो वह पूर्ण मन पर झूठे आरोप लगाने लगती है और रोने लगती है।

राजा को नुणादे की बात पर यकीन नहीं होता वह कहता है कि मेरा बेटा पूरणमल अन्य पुरुषों जैसा नहीं है उसने अविलक्षण की शिक्षा ली है धर्म कर्म का उसे गहरा ज्ञान है, तू उस पर झूठा दोष लगा रही है। यदि फिर ऐसा बात कही तो तेरा सर कलम कर दूंगा।

राजा को नुणादे की बात पर यकीन नहीं हो पाता है। महल में पूछताछ करता है। सुलेमान पूरणमल से पूछता है दोस्त तुम्हारा है या मौसी का, कहता है दोनों का नहीं।

सुलेमान उसका सरकार से लगता है ऐसे में और रूपेशाह दीवान उसका हाथ पकड़ लेता है और कहता है कि पूरणमल निर्दोष है राजा उसकी बात नहीं मानता है। जब पूरणमल की मां को पता चलता है कि राजा उसका कत्ल करने वाला है वह भागी भागी आ जाती है।
राजा जंगल में उसका कत्ल करके उसकी आंखें निकालने का आदेश देता है। और कटोरे में खून भरकर लाने को कहता है। उसकी आखिरी इच्छा अपने मौसी से मिलने की होती है वह उनको आखरी प्रणाम करके आ जाता है।

सत्यवान सावित्री

सत्यवान सावित्री कथा एक ऐसे युग में कन्या के अधिकारों की एवं उसके प्रति उसके पिता के प्रेम का एक ऐसा स्वरूप समक्ष रखती है जोकि उस समय की स्थिति के मुताबिक अनुकूल नहीं थी। एक राजा जैसे की कोई संतान नहीं हो पा रही थी उसने उसने तप किया और उसके फल स्वरुप उसे देवी ने दर्शन दिए और देवी ने उसे एक कन्या का वरदान दिया।
भले ही यह वरदान राजा को उस समय पसंद ना आया हो परंतु राजा ने उसे सहर्ष स्वीकारा । उसका नामकरण संस्कार धूमधाम से किया और उसका नाम सावित्री रखा।

"तेरे मन की बात सोचकै, मैं ब्रह्मा तै बतलाई,
यज्ञ हवन तप व्रत से खुश हो, कन्या तुरन्त रचाई,
इस तैं आगे और सवाल भूलकै, करै मत भाई,
होणां सै जो इसतै होज्या, इसमें तेरी भलाई,
ब्रह्मा नै वरदान दिया मनै, ल्हको कै कित धरणा से ।।

वो देवी अन्तरध्यान हुई, और राजा अपने घर आग्या,
आन्नद से राजा सकल प्रजा का पालन करण लाग्या।।"

राजा हरिश्चंद्र

राजा हरिश्चंद्र संघ में पंडित लख्मीचंद द्वारा राजा हरिश्चंद्र की जीवन का वर्णन किया गया है जहां पर कि राजा हरिश्चंद्र की प्रशंसा हर दिशाओं में गूंज रही थी वहीं पर राजा हरिश्चंद्र इस प्रशंसा से कई लोग असहज भी हो रहे थे। उनकी इस बढ़ती हुई लोकप्रियता की चर्चा इंद्रदेव की सभा में भी होने लगी। राजा हरिश्चंद्र के दानी स्वरूप की और उनके इस महान कर्तव्य की चर्चा जब इंद्रलोक में हो रही थी तब इंद्र की सभा में महर्षि विश्वामित्र भी बैठे हुए थे।

महर्षि विश्वामित्र ने निर्णय लिया कि वह राजा हरिश्चंद्र की परीक्षा लेंगे। इसके लिए विश्वामित्र ने अपने जब और तप से एक कन्या को राजा हरिश्चंद्र के राज्य में भेजा जहां पर राजा हरिश्चंद्र ने उस कन्या को गोद ले लिया। उस कन्या को गोद लेने के बाद जब उसके विवाह की बेला है तब कन्यादान के समय उस कन्या ने राजा से कन्यादान करने के बदले राजकोष मांग लिया। उसके बाद जिस लड़के से उस कन्या का विवाह हुआ था वह लड़का राजा से राजगद्दी मांग।

नौटंकी

नौटंकी का सांग पंडित लख्मीचंद की प्रेम पर आधारित रचना मानी जाती है। इसमें पंडित लखमीचंद ने बताया कि स्यालकोट में राजा गजे सिंह राज करते थे। उनके दो बेटे थे। बड़े बेटे का नाम भूपसिंह व छोटे बेटे का नाम फूलसिंह था। राजा गजे सिंह की मौत के बाद भूपसिंह राजा बन जाते है। राजा भूपसिंह का एक दोस्त सेठ कुंदन था। सेठ कुंदन की पद्मी राजा भूपसिंह की रानी से फूलसिंह की शादी कराने का प्रस्ताव रखती है। जिसे फूलसिंह इंकार कर देता है। एक दिन फूलसिंह शिकार खेलकर आता है और अपनी भाभी से पानी मांगता है। भाभी पानी देने से इंकार कर देती है और ताना मारती है कि पानी पीना है तो नौटंकी से शादी कर घर ले आना। नौटंकी मुलतान शहर के राजा कर्णसिंह की पुत्री थी।

नौटंकी से शादी करने का प्रण लेकर फूलसिंह घर से निकल जाता है। वह मुलतान शहर में एक बाग में मालन के पास ठहर जाता है। एक दिन वह एक फूलों का हार बनाकर नौटंकी के पास भेजता है। जब नौटंकी पूछती है कि मालन यह हार किसने बनाया तो वह झूठ बोल देती है कि उसके भांजे की बहू ने हार बनाया था। नौटंकी मालन से भांजे की बहू को बुलाने का आदेश देती है। यहां पर फूलसिंह बने विष्णुदत्त सांगी ने साड़ी पहनकर मालन के भांजे की बहू का रोल किया और नौटंकी के पास गया। नौटंकी फूलसिंह का सच जान जाती है और उसे कैद करा देती है। जब फूलसिंह को फांसी की सजा दी जाती है तो मुलतान शहर के मंत्री ने राजा कर्णसिंह से कहा कि इसे दानव के हवाले कर दो। यह दानव पूरे मुलतान शहर को परेशान करता था। राजा ने घोषणा कर रखी थी कि जो व्यक्ति दानव की हत्या करेगा, वह उससे अपनी बेटी का विवाह करेगा। फूलसिंह दानव के साथ हुई लड़ाई में जीत जाता है और दानव का वध कर देता है। अपनी शर्त के अनुसार राजा कर्णसिंह अपनी पुत्री नौटंकी का विवाह फूलसिंह से कर देता है।

ज्यानी–चोर

सांग "ज्यानी–चोर" में नायक ज्यानी चोर द्वारा निर्दयी पठान अदली खां के चंगुल से रानी महकदे को छुड़वाने की कहानी वर्णित है,सांग मरवन के यहाँ भात भरने के प्रसंग से आरम्भ होता है,ज्यानी चोर और राजकुमार सुल्तान दोनों मित्र आपनी धर्म बहन मरवन के घर भात भरने के उद्देश्य से नरवरगढ की यात्रा पर निकल पड़े तो मार्ग में सुल्तान को नदी में बहता हुआ एक पत्र मिला,जिसमे महकदे ने लिखा था कि वह क्रूर एवं निर्दयी पठान अदली खां की कैद में बंद है और कोई क्षत्री हो

तो उसे कैद से छुडाये, चिट्टी को पढ़कर सुल्तान ने पहले महकदे को कैद से छुडाने की बात सोची,परन्तु ज्यानी चोर ने इस काम का जिम्मा स्वयं ले लिया और सुल्तान को मरवन के यहाँ भात भरने के लिए भेज दिया ताकि लोग धर्म के भाई–बहन के पवित्र रिश्ते को लेकर व्यर्थ की बदनामी न करे। कहते है कि ज्यानी चोर को देवी माई का वरदान प्राप्त था,जिस के कारन वह मनोवांक्षित रूप धारण कर सकता था,अदली खां पठान की नगरी में पहुच कर ज्यानी चोर ने चतुराई से काम लिया,उसने शाही बाग की मालकिन से मौसी का रिश्ता निकल लिया,सर्वप्रथम ज्यानी चोर ने उसको पकड़ने की प्रतिज्ञा करने वाले,धम्मल सुनार की लड़की कू उसके पति का भेष धारण कर लूटा,तदन्तर ज्यानी चोर को पकड़ने का बीड़ा उठाने वाले दरोगा को स्त्री का रूप धारण कर 'काठ'(दण्ड देने का एक यंत्र) में उसे जकड दिया,अंत में ज्यानी–चोर ने अदली खां को नींद में दाढ़ी व मूछ काट ली और महकदे को कैद से छुडावा लिया, "ज्यानी चोर" सांग का कथानक आपनी अनेक चमत्कारपूर्ण घटनाओ के कारन दर्शको में अत्यंत लोकप्रिय रहा हैध

सांग शाही लकड़हारा

शाही लकडहारा जोधपुर के राजा जोधनाथ की रानी रूपाणी के गर्भ से उत्त्पन्न पुत्र था,अपने पति के साथ किसी शर्त में विजयी होने पर भी रानी राजदरबारियो के अन्याय का सीकर हुई,फलस्वरूप उसे बनवास का दण्ड भुगतना पड़ा,बनवास में ही रानी रूपाणी ने एक पुत्र को जन्म दिया,कुछ वर्षो के पश्चात मरते वक्त रूपाणी ने अपने बच्चे का जीवन परिचय लिख कर तब्बेज के रूप में लिख कर ताबीज के रूप में उसके गले में पहना दिया,सभी लोग उस बालक को 'शाही लकडहारा' कहकर पुकारने लगे,दूसरी ओर माधवपुर के राजा रायसिंह अपनी बड़ी पुत्री बीना द्वारा यह कहने पर कि वह अपने बह्ग्य की स्वयं निर्माता है और इश्वर के सहारे जीवित है,राजा नाराज हो गये,राजा ने कंगाल और निर्धन शाही लकडहारे से बीना की शादी कर दी,बीना बुद्धिमान तो थी ही,जब उसको पता चला कि उसका पति शाही लकडहारा कई वर्सो तक सेठ लोभी लाल को प्रतिदिन बीस धड़ी(लगभग 100 किलो) चन्दन की लकड़ी सप्लाई करता रहा है,तो उसने सेठ से हिसाब माँगा,इस पर उसे काफी धन मिला ,इस तरह पति–पेनी धनि एवं संपन्न हो गये,जब वे दोनों गंगा स्नान को गये तो वहा ताबीज के टूट कर गिरने से इस भेद का पता चल गया कि वास्तव में शाही लकडहारा एक राजकुमार है,शाही लकडहारा गंगा में जल–विहार के लिए नौका लेने गया तो विजय सिंह और जालीम सिंह द्वारा बंदी बना लिया गया,इन्ही डाकुओ की कैद से मुक्त करने में पहले से ही बंदी बेला ने शाही लकडहारे को कैद से मुक्ति करने में उसकी मदद की,जब पति की तलाश करती हुई बीना इधर से गुजरी तो उसे भी इन डाकुओ ने बंदी बना लिया,संयोगवश शाही लकडहारे के पिता जोध्नाथ का उधर से गुजरना हुआ,जिसने बीना को डाकुओ से मुक्त कराया और उसे अपनी धर्म की बेटी बना कर अपने घर ले गये, शाही लकडहारे की कथा सुनाएगा,वह उसके पति के रूप में आपनाएगी,एक दिन शाही लकडहारे ने इस चुनौती को सुविकार किया तथा अपनी आत्मकथा सुनाने के उद्देश्य से राजा के दरबार में पहुच गया,बीना ने पति को पहचान लिया और इस तरह दोनों का पुनर्मिलन हुआ,उधर बेला नही नर्तकी के

रूप में वहा चली आई और रजा रे सिंह अतिथि के रूप में,इस प्रकार परिवार का पुनर्मिलन हुआ।

सत्यवान –सावित्री

इस सांग ने सावित्री की माता एक घरेलू स्त्री है। वह अपनी जवान कन्या सावित्री की देखकर चिंता प्रकट करती है और उसके लिए योग्य वर खोजने के लिए अपने पति से निवेदन करती है। राजा अश्वपति जब स्वयं अपनी कन्या के लिए उपयुक्त वर नहीं खोज पाते, तो वह सावित्री को ही अपना वर तलाशने की आज्ञा देते हैं। पिता के आदेश पर सावित्री वनवासी सत्यवान को पति के रूप में चयन करती है। नारद उसे बताते हैं हैं कि सत्यवान मात्र एक वर्ष तक ही जीवित रह पाएगा। वह अपने संकल्प पर दृढ़ रहती है और पति की खातिर महलों के सुख–भोग त्याग वन के कष्टदायक जीवन को सहर्ष अपनाती है। सांग में सर्वत्र सावित्री और उसका चरित्र प्रमुख है। सत्यवान के गुणों का बखान कवि स्वयं करता है। उसके कार्यकलापों से उसके चरित्र की महानता उद्घाटित नहीं होती। दूसरी ओर सावित्री अपनी सेवा–भावना और समय एवं स्थिति के अनुसार सदाचरण कर प्रभावित करती है। वह अपनी सहज सेवा और सास–ससुर की रुचि के अनुरूप घर गृहस्थी का धर्म निभा का परिवार के सभी सदस्यों का मन जीत लेती है। वह यमराज के सम्मुख विनम्र निवेदन कर अपने स्थिर व सौम्य स्वभाव एवं असीम पति–भक्ति द्वारा यमराज एक से पति को वापस मांग कर विलक्षण बुद्धि व प्रतिभा संपन्न होने का प्रमाण देती है।

पूरण भगत

सांग पूरण भगत स्यालकोट के राजा शीलवहन के पुत्र पूर्णमल की कहानी है ,जो विवाह न करके 'जोग मार्ग' द्वारा मुक्ति चाहता है परंतु पिता की आज्ञा पालनार्थ, जब वह अपनी मौसी नूणादे के दर्शनार्थ उसके महल में गया तो मौसी पूर्णमल के यौवन एवं रूप पर आसक्त हो जाती है। राधे पहले तो पूर्णमल से अनुनय विनय पूर्वक प्रणय निवेदन करती है, पर पूरण के ना करने पर वह कोप भवन में 'आसन–पाटी' लेकर पड़ जाती है। राजा के पूछने पर वह झूठी शिकायत करती है कि पूरणमल ने उसका शील हरण करने की कोशिश की है। इस पर दीवान रुपेशाह और बड़ी रानी इछरांदे राजा को समझाने का प्रयास करती है राजा कोई तर्क ना सुनकर पूर्णमल को प्राण दंड देता है। संयोगवश गुरु गोरखनाथ वहां से गुजरे तो कुएं से पूर्णमल को निकालकर उसका उपचार किया और उसे अपनी मंडली में शामिल कर लिया। माता इछरांदे पुत्र वियोग में अंधी हो जाती है। बाग–बगीचे सूख जाते हैं। एक दिन गुरु गोरखनाथ और उनकी साधु मंडली ने जब इन बागों में प्रवेश किया तो वे पुणे हरे भरे हो गए। इस चमत्कार से प्रभावित होकर राजा शीलवाहन दरबारियों समेत गोरखनाथ जी के दर्शनार्थ बाग में गए। माता इछरांदे अपने पुत्र पूर्णमल को गुरु गोरखनाथ के आशीर्वाद के फल स्वरुप जीवित देखकर निहाल होती है।

सांग मीराबाई

मीरा जोधपुर के राजा मिडत की पुत्री थी। बाल्यावस्था से ही कृष्ण को पति मानकर उनकी पूजा करने लग गई थी। जब मेरा का विवाह उदयपुर के राणा के साथ कर दिया गया तब भी वह भगवान श्रीकृष्ण की भक्ति में ही लीन रही। उन्होंने राणा जी को ह्रदय से पति कभी नहीं माना। 'मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरा न कोई 'इस बात को ही वह आजीवन टेरती रहीं। रंग में मीरा राणा जी को कई बार 'भाई रे'कह कर संबोधित करती हैं। राणा जी ने विष का प्याला पिलाकर मेरा की परीक्षा ली परंतु विष का प्याला पीने के पश्चात भी वह प्रसन्न मन हरि कीर्तन करने में तल्लीन रही। राणा जी समझ गए थे कि मीरा के प्रभु भक्ति सच्ची एवं सात्विक है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

1. पं. लखमीचन्द ग्रंथावली, संपादक : डॉ. पूर्णचन्द शर्मा, हरियाणा ग्रंथ अकादमी, पंचकूला, अकादमी भवन, पी–16, सेक्टर 14, पंचकूला – 134113, पंद्रहवां संस्करण 2019

2. हिन्दी रंगमंच का लोक प्रश्न सम्पादक – रमेश गौतम

(स्वराज प्रकाशन),21 अंसारी रोड, दरियागंज नई दिल्ली 110002

3. पं. लखमीचंद के सांग साहित्य में लोक चेतना– सुशीला कुमारी भारद्वाज

विक्रेता प्रकाशन– नेहा पुस्तक केंद्र, प्रगति विहार, सोम बजार ,दिल्ली, –110053
प्रथम संस्करण –2016

4. बाजेभगत और पं० लखमीचन्द के दार्शनिक विचारों का तुलनात्मक अध्ययन (शोध–प्रबन्ध), शोधकर्ता– डॉ. विकास कुमार

– हरियाणा ग्रंथ अकादमी, पंचकूला अकादमी भवन, पी16, सैक्टर–14,पंचकूला– 134113 प्रथम संस्करण– 2019

5. ."पंडित लखमीचंद के सांगो में मूल्य बोध" , डॉ.श्रवण कुमार, हरियाणा ग्रंथ अकादमी, पंचकूला अकादमी भवन, पी16, सैक्टर–14,पंचकूला– 134113
6. 'सांग सम्राट लखमीचंद' – डॉ. राजेंद्र स्वरूप वत्स, हरियाणा साहित्य अकादमी, चंडीगढ़
7. "हरियाणा की लोक धर्मी नाट्य परम्परा" , डॉ.पूर्णचंद्र शर्मा

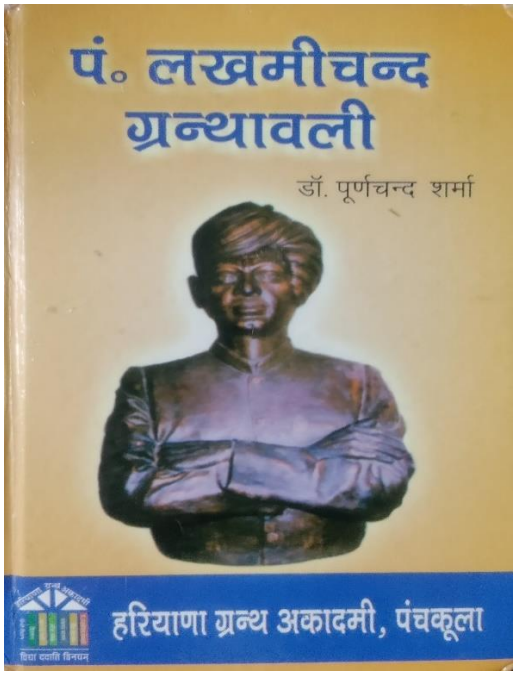
पं० लखमीचन्द
ग्रन्थावली
डॉ. पूर्णचन्द शर्मा
हरियाणा ग्रन्थ अकादमी, पंचकूला

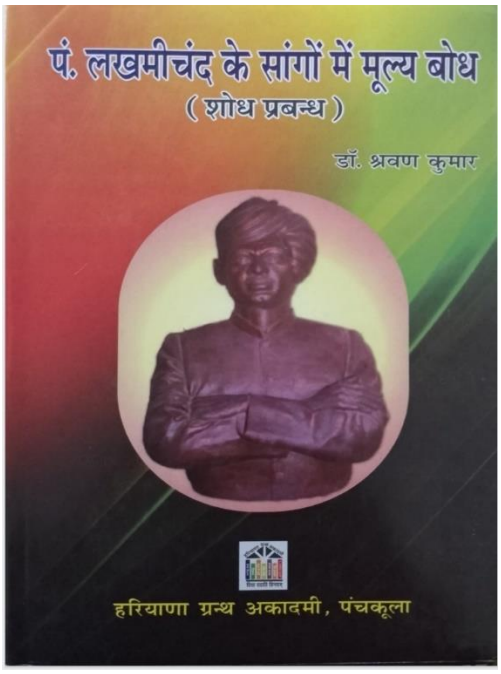
पं. लखमीचंद के सांगों में मूल्य बोध
(शोध प्रबन्ध)
डॉ. श्रवण कुमार
हरियाणा ग्रन्थ अकादमी, पंचकूला

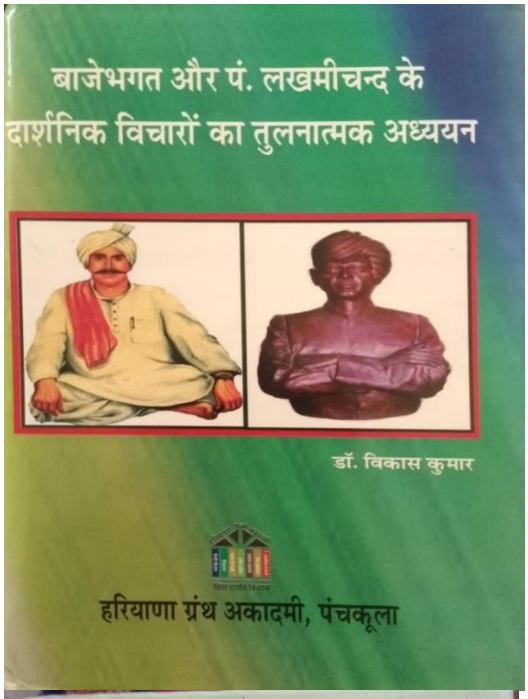
बाजेभगत और पं. लखमीचन्द के
दार्शनिक विचारों का तुलनात्मक अध्ययन
डॉ. विकास कुमार
हरियाणा ग्रंथ अकादमी, पंचकूला

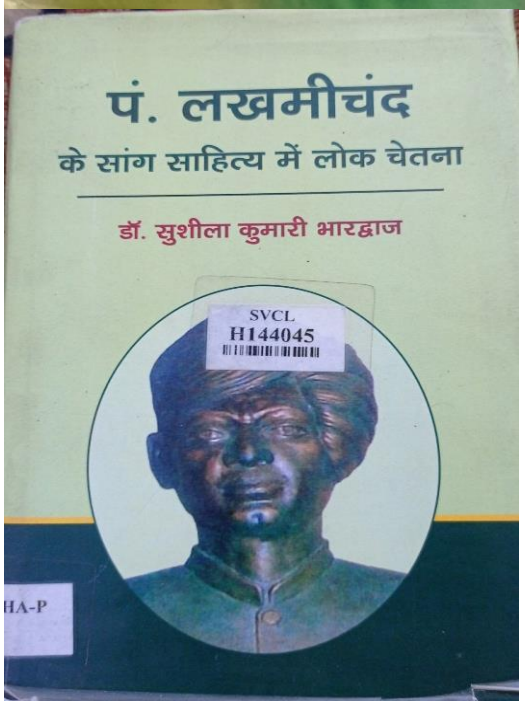
पं. लखमीचंद
के सांग साहित्य में लोक चेतना
डॉ. सुशीला कुमारी भारद्वाज
SVCL
H144045
HA-P

सांग सम्राट् पं० लखमीचन्द

लेखक :
डॉ० राजेन्द्र स्वरूप वत्स
उपनिदेशक लोक सम्पर्क विभाग, हरियाणा
चण्डीगढ़

SVCL
H63051

हरियाणा साहित्य अकादमी,
चण्डीगढ़